B-3
विशुद्ध चण्डी
श्रीदुर्गासप्तशती

इस संस्करण की विशेषतायें

—'श्री दुर्गा सप्तशती' पाठ के अनेक क्रम हैं। इस पुस्तक में सभी प्रचलित 'पाठ-क्रम' बताए गए हैं, जिससे पाठ-क्रम निश्चित करने में सुविधा होगी।

—इस पुस्तक में १५ पृष्ठों में क्रम से सरल भाषा में 'विस्तृत-पूजा-पद्धति' प्रस्तुत की गई है, जिसकी सहायता से कोई भी व्यक्ति पूजा कर सकता है।

—जो समयाभाव से विस्तृत पूजा नहीं कर सकते; उनके लिए 'संक्षिप्त पूजा-पद्धति' प्रकाशित की गई है, जो श्रद्धालु भक्तों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

—अर्गला, कीलक, कवच, नवार्ण-जप, सप्तशती-न्यास, रहस्य-त्रय-न्यास का पूरा विधान पहले पहल इस पुस्तक में प्रकाशित किया गया है।

—भगवती श्री दुर्गा का ध्यान-सम्मत सुन्दर रङ्गीन चित्र दिया गया है। इससे ध्यान में सुविधा होगी।

—पहले पहल इस संस्करण में संस्कृत के समास शब्दों को हाइफन (-) चिह्नों से स्पष्ट कर छापा गया है, जिससे शुद्ध पाठ करने में बड़ी सुविधा होगी।

—'चरित्र' शब्द उपयुक्त नहीं, उसके स्थान में 'चरित' शब्द का ही उच्चारण करना चाहिए। इसी प्रकार प्रारम्भ में 'अथ' अन्त में 'इति' शब्दों को नहीं कहना चाहिये। विभिन्न पाठ-भेदों के भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। सप्तशती का यह संस्करण इन जैसी त्रुटियों से सर्वथा रहित है।

* ॐ ह्रीं *

विशुद्ध चण्डी

श्री दुर्गा सप्तशती

या चण्डी मधु-कैटभादि-दलनी या माहिषोन्मूलिनी,
या धूम्रेक्षण-चण्ड-मुण्ड-मथनी या रक्तबीजाशनी ।
शक्तिः शुम्भ-निशुम्भ-दैत्य-दलनी या सिद्धि-दात्री परा,
सा देवी नव-कोटि-मूर्ति-सहिता मां पातु विश्वेश्वरी ॥

सम्पादक

'कुल-भूषण' पं० रमादत्त शुक्ल, एम० ए०

प्रथम संस्करण : भाद्रपद शुक्लाष्टमी २०३७ वि०

दो शब्द

श्री चण्डी (श्री दुर्गा सप्तशती या देवी-माहात्म्य) का एक विशुद्ध संस्करण प्रकाशित करने का विचार वहुत दिनों से रहा है। श्री जगदम्वा की दया से प्रस्तुत संस्करण द्वारा उस विचार की पूर्ति ग्राज हो रही है।

इस संस्करण द्वारा प्रचलित सप्तशती को ग्रधिक-से-ग्रधिक विशुद्ध रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। वैसे यहाँ यह उल्लेखनीय है कि श्री जगदम्वा के प्रीत्यर्थ उनकी दया प्राप्त करने के लिये शुद्ध-ग्रशुद्ध कैसा भी पाठ किया जाय, पाठ करनेवाले का सब प्रकार से कल्याण ही होता है। तथापि प्रयत्न यही होना चाहिये कि पाठ अधिक-से-ग्रधिक शुद्ध हो। इसी भावना से चण्डी का यह विशुद्ध संस्करण प्रस्तुत किया गया है। विद्वान् ग्रौर ग्रनुभवी साधकों से विनम्र ग्रनुरोध है कि इसमें यदि उन्हें कहीं कोई त्रुटि दिखाई दे, तो कृपया हमें सूचित करें, जिससे ग्रगले संस्करण में उसे दूर किया जा सके।

'विशुद्ध चण्डी' का यह संस्करण हम सभक्ति 'कौल-कल्पतरु' स्व० पण्डित देवीदत्त शुक्ल की पुण्य स्मृति में ग्रध्यात्म जगत् को समर्पित करते हैं क्योंकि ऐसा संस्करण प्रकाशित करने का मूल विचार उन्हीं से प्रेरित रहा है।

प्रयाग —कुलभूषण

मुद्रक तथा प्रकाशक : कल्याण मन्दिर प्रकाशन
ग्रलोपीबाग मार्ग, प्रयाग—६

मूल्य ६-०० रु०

अनुक्रम

पाठ के नियम

१ पाठ-यज्ञ का पहला नियम यह है कि पाठक को पाठ्य विषय का सूक्ष्मार्थ-ज्ञान हो। यदि सूक्ष्मार्थ-ज्ञान न हो, तो स्थूलार्थ अर्थात् शब्दार्थ ज्ञान अवश्य होना चाहिये। प्रत्येक पद का अर्थ समझते हुए यह ध्यान रखते हुये कि साक्षात् भगवती जगदम्बा पाठ को सुन रही हैं, एकाग्र-चित्त से पाठ करे।

२ पाठ न तो बहुत जोर-जोर से करे, न ही मन-ही-मन। धीरे-धीरे संयत स्वर में ऐसा पाठ करे, जिसे पाठक स्वयं सुन सके।

३ निष्काम पाठ में विस्तृत विधि का पालन आवश्यक नहीं है। सोते-जागते, बैठते-चलते सभी अवस्थाओं में देवता के प्रीत्यर्थ पाठ कर सकते हैं।

४ सकाम पाठ में विधि का पालन आवश्यक है।

५ रात्रि-सूक्त और देवी-सूक्त वैदिक तथा स्मार्त्त दो प्रकार के हैं। वैदिक सूक्तों का पाठ वैदिक स्वर के ज्ञाता को ही करना चाहिये। सर्व-साधारण को स्मार्त्त सूक्तों का ही पाठ करना उचित है।

६ हाथ में या भूमि पर पुस्तक रखकर और सिर आदि अङ्गों को हिलाते हुए या ऊँघते हुए अथवा अन्य कोई बात सोचते हुए पाठ नहीं करना चाहिये। पुस्तक को किसी आधार पर स्थापित करे और स्थिर आसन में बैठकर ध्यान से पाठ करे।

७ अध्याय या स्तोत्र के मध्य में विराम न करे। यदि किसी कारण-वश बीच में पाठ बन्द करना पड़े, तो फिर प्रारम्भ से अध्याय या स्तोत्र का पाठ करे।

८ अर्गला, कीलक, कवच, सप्तशती के अध्यायों और रहस्य-त्रय आदि के प्रारम्भ में 'अथ' और अन्त में 'इति', 'सम्पूर्ण' जैसे शब्दों का उच्चारण न करे। सभी स्तवों के अन्त में क्षमा-प्रार्थना करे—

ॐ यदक्षरं परि-भ्रष्टं मात्रा-हीनञ्च यद् भवेत् ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ! ॥

९ नवार्ण मन्त्र का जप केवल दीक्षा-प्राप्त व्यक्तियों को ही करना चाहिये। जिन्हें नवार्ण-मन्त्र की दीक्षा नहीं मिली है, उन्हें केवल स्तोत्रों का पाठ करना चाहिये।

१० नवार्ण-मन्त्र का जप सप्तशती के पाठ के ठीक पहले और अन्त में एक-एक माला या कम-से-कम ११ वार करना चाहिए। प्रारम्भ के जप में विनियोगादि सहित नवार्ण-मन्त्र का जप करे, अन्त के जप में केवल नवार्ण-मन्त्र का ही जप करे, विनियोगादि करने की आवश्यकता नहीं है।

११ शुद्ध जल के साथ-साथ पूजन हेतु कम-से-कम पञ्चोपचार की यथाशक्ति व्यवस्था पहले से अवश्य कर ले। यथा—१ गन्धाक्षत (लाल चन्दन, सिन्दूर, रोली आदि व समूचे चावल), २ पुष्प (लाल, पीले, सफेद सुगन्धित फूल व फूल-माला), ३ धूप (शुद्ध अगर-वत्ती आदि), ४ दीप (शुद्ध घी की फूलबत्ती), ५ नैवेद्य (उत्तम शुद्ध मिठाई, वताशा, फल आदि)।

१२ पाठ-यज्ञ में जिस किसी का जो भी सहयोग हो, उसके लिए उसे पर्याप्त दक्षिणा (पारिश्रमिक) अवश्य दे अन्यथा उसके असन्तुष्ट रहने से पाठ का फल मिलने में वाधा होती है।

पाठ-क्रम

'दुर्गा-सप्तशती' (चण्डी) पाठ के अनेक क्रम प्रचलित हैं। अतः सबसे पहले यह निश्चय कर लेना चाहिये कि चण्डी का पाठ किस 'क्रम' के अनुसार करना है। इस सम्बन्ध में पहला पाठ-क्रम तो स्वयं भगवती ने ही अपने श्रीमुख से सप्तशती के बारहवें अध्याय में इस प्रकार निर्दिष्ट कर दिया है कि—

प्रथम दिव्य पाठ-क्रम

१—'एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः।'

२—'मधु-कैटभ-नाशं च महिषासुर-घातनम्।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्-वद् वधं शुम्भ-निशुम्भयोः।'

३—'अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैक-चेतसः।'

४—'सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च।'

अर्थात् सप्तशती के तेरह अध्यायों में वर्णित सम्पूर्ण चरित का नित्य पाठ करना चाहिए। इस 'चरित' के अतिरिक्त अन्य किसी स्तोत्रादि के पाठ या मन्त्रादि के जप का निर्देश सप्तशती में नहीं मिलता। अतः श्री जगदम्बा के वचनों में अटूट श्रद्धा रखनेवाले भक्त-जन केवल इन्हीं तेरह अध्यायों का पाठ करते हैं। 'कौल-कल्पतरु' पण्डित देवीदत्त शुक्ल ने इसीलिये केवल इन्हीं १३ अध्यायों का हिन्दी पद्यानुवाद प्रस्तुत किया है, जिससे संस्कृत न जाननेवाले भक्त भी पूर्ण भाव के सहित देवी-चरित का पारायण कर उसकी महिमा से लाभ उठा रहे हैं।

भगवती की उपर्युक्त उक्तियों से सप्तशती के पाठ के संबन्ध में यह भी क्रम ज्ञात होता है कि यदि तेरह अध्यायों का नित्य पाठ करना सम्भव न हो, तो कम-से-कम अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी के तीन दिनों में सम्पूर्ण चरित का पाठ करे।

सम्पूर्ण चरित का पाठ एक दिन में करना जिनके लिए सम्भव न हो, वे सप्तशती के अन्दर आई हुई स्तुतियों का ही पाठ करके लाभ उठा सकते हैं। ये स्तुतियाँ निम्न प्रकार हैं—

१ प्रथम अध्याय में ब्रह्मा द्वारा की गई स्तुति, जो 'रात्रि-सूक्त' के नाम से प्रसिद्ध है।

२ चतुर्थ अध्याय में देवताओं द्वारा की गई स्तुति, जो 'शक्रादि-स्तुति' नाम से प्रख्यात है।

३ पञ्चम अध्याय में देवताओं द्वारा की गई स्तुति, जो 'देवी-सूक्त' नाम से प्रसिद्ध है।

४ एकादश अध्याय में सुर-गुण द्वारा की गई स्तुति, जो 'नारायणी-स्तुति' के नाम से प्रख्यात है।

इन चार स्तुतियों का नित्य पाठ कर भक्त लोग अपना कल्याण-साधन कर सकते हैं।

इस प्रकार मूल तीन चरितों (१३ अध्यायों) के इस पाठ-क्रम के तीन स्वरूप पाठ करनेवालों के लिए निर्दिष्ट हैं—

(१) तेरह अध्यायों का सम्पूर्ण पाठ प्रतिदिन, (२) सम्पूर्ण पाठ केवल तीन तिथियों—अष्टमी, नवमी और चतुर्दशी के दिन या (३) उक्त चारों स्तुतियों का पाठ प्रतिदिन।

इन तीन क्रमों के अतिरिक्त एक क्रम और मिलता है, जो सात दिनों में पूर्ण होता है, इसका सूत्र है—"पा-ठो-यं-व-र-का-रः।"

इस सूत्र की व्याख्या यह है कि पहले दिन एक अध्याय, दूसरे दिन दो अध्याय, तीसरे दिन एक अध्याय, चौथे दिन चार अध्याय, पाँचवें दिन दो अध्याय, छठे दिन एक अध्याय और सातवें दिन अन्तिम दो अध्यायों का पाठ कर चरित-त्रय का पारायण पूर्ण करे। इसे और भी स्पष्ट इस प्रकार कह सकते हैं कि पहले दिन प्रथम अध्याय, दूसरे दिन द्वितीय व तृतीय अध्याय, तीसरे दिन् चतुर्थ अध्याय, चौथे दिन पञ्चम, षष्ठ, सप्तम व अष्टम अध्याय, पाँचवें दिन नवम व दशम अध्याय, छठे दिन एकादश अध्याय और सातवें दिन द्वादश व त्रयोदश अध्याय का पाठ करे ।

इन क्रमों के अतिरिक्त भक्त-जन गुरुदेव की अनुमति से अपनी सुविधानुसार प्रतिदिन एक-एक अध्याय का पाठ कर तेरह दिनों में भी सप्तशती (चण्डी) का एक पाठ पूरा करते हैं। अथवा प्रथम दिन प्रथम चरित, द्वितीय दिन मध्यम चरित और तृतीय दिन उत्तम चरित का पाठ कर तीन दिन में पाठ को पूर्ण करते हैं।

इसी 'दिव्य पाठ-क्रम' के अन्तर्गत एक और संक्षिप्त क्रम सप्तशती के सात चुने हुए श्लोकों के पाठ करने का है। ये श्लोक 'सप्त-श्लोकी दुर्गा' के नाम से प्रसिद्ध हैं।

द्वितीय आर्ष पाठ-क्रम

सप्तशती के छः अङ्गों सहित पाठ करने का क्रम 'आर्ष' या ऋषि-सम्मत माना गया है। ये छः अङ्ग हैं—१ अर्गला, २ कीलक, ३ कवच, ४ प्राधानिक रहस्य, ५ वैकृतिक रहस्य और ६ मूर्ति रहस्य। इनमें से तीन (अर्गला, कीलक, कवच) का पाठ सप्तशती-पाठ के पहले करना होता है और शेष तीन रहस्यों का पाठ सप्तशती का पाठ कर चुकने के बाद किया जाता है।

अर्गला, कीलक, कवच के पाठ के सम्बन्ध में दो मत हैं—

१—अर्गलं कीलकं चादौ पठित्वा कवचं पठेत् ।
जप्या सप्तशती पश्चात् सिद्धि-कामेन मन्त्रिणा ॥
२—कवचं बीजमादिष्टमर्गला शक्तिरुच्यते ।
कीलकं कीलकं प्राहुः सप्तशत्या महा--मनोः ।

यथा सर्व-मन्त्रेषु बीज-शक्ति-कीलकानां प्रथममुच्चारणम् । तथा सप्तशती-पाठेऽपि कवचार्गला-कीलकानां प्रथमं पाठः स्यात् ॥

इस प्रकार इस आर्ष पाठ-क्रम के दो स्वरूप निर्दिष्ट हैं—

१—अर्गला, कीलक, कवच का पाठ कर सप्तशती का पाठ करे । अन्त में तीनों रहस्य पढ़े ।

२—कवच, अर्गला, कीलक का पाठ कर सप्तशती का पाठ करे । अन्त में तीनों रहस्य पढ़े ।

इन दो क्रमों के अतिरिक्त एक विस्तृत पाठ-क्रम यह भी प्रचलित है कि उक्त छः अङ्गों के साथ ही सप्तशती-पाठ के पूर्व वैदिक या तान्त्रिक (स्मार्त) 'रात्रि-सूक्त' का और सप्तशती-पाठ के तुरन्त वाद वैदिक या तान्त्रिक (स्मार्त) 'देवी-सूक्त' का पाठ करे । 'अधिकस्य अधिकं फलं' को माननेवाले इस क्रम में और भी विस्तार कर आरम्भ में 'श्री देव्यथर्वशीर्ष' व नवार्ण-मन्त्र का जप और अन्त में पुनः नवार्ण-मन्त्र का जप तथा कुञ्जिका स्तोत्र, देव्यपराध क्षमापन स्तोत्र आदि को जोड़ लेते हैं । यह सव भक्तों के समय और सुविधा पर निर्भर है । जैसा गुरुदेव का निर्देश हो और जैसा अपने द्वारा सम्भव हो, वैसा ही 'चण्डी-पाठ-क्रम' अपना निश्चित कर लेना चाहिये ।

विस्तृत पूजा-पद्धति

पवित्र होकर शिखा-बन्धन व तिलक-धारण कर प्रातः-कृत्य समाप्त कर पूर्व या उत्तर ओर मुखकर बैठे। फिर आचमन कर विष्णु का स्मरण करे। यथा—

ॐ तद् विष्णोः परमं पदं, सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्। ॐ विष्णुः, ॐ विष्णुः, ॐ विष्णुः। ॐ पुण्डरीकाक्षः।

अर्चना—गन्ध-पुष्पादि पूजा-सामग्री पर निम्न मन्त्र से जल छिड़के—

ॐ एतेभ्यो गन्ध-पुष्पादिभ्यो नमः।

अब शालग्राम या जल में निम्न मन्त्रों से गन्ध-पुष्प छोड़ते हुये पूजन करे—

एते गन्ध-पुष्पे ॐ नमो नारायणाय नमः। एते गन्ध-पुष्पे ॐ गुरवे नमः। एते गन्ध-पुष्पे ॐ आदित्यादि-नव-ग्रहेभ्यो नमः। एते गन्ध-पुष्पे ॐ ब्राह्मणेभ्यो नमः। एते गन्ध-पुष्पे ॐ सूर्याय नमः।

ताम्र-पात्र में अर्घ्य सजाकर निम्न मन्त्र से सूर्य को अर्घ्य प्रदान करे—

इदमर्घ्यं ॐ श्रीसूर्य-भट्टारकाय नमः

यजुर्वेदी उपासक 'इदमर्घ्यं' के स्थान पर 'एषोऽर्घ्यः' कहें।

स्वस्ति-वाचन—यदि चण्डी-पाठ की अनेक आवृत्तियों का अनुष्ठान होना है और उसके लिए अनेक ब्राह्मणों का सह-

योग लेना है, तो इस स्थल पर यजमान (अनुष्ठान करवाने-वाला व्यक्ति) अनुष्ठान करने के लिये चुने गये ब्राह्मणों की सहमति और शुभ-कामना प्राप्त करे। इसकी विधि यह है कि यजमान उत्तर को ओर मुख कर बैठे और हाथ में अक्षत लेकर ब्राह्मणों से कहे—

ॐ कर्त्तव्येऽस्मिन् देवी-माहात्म्य-पाठ-कर्मणि ॐ पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु, ॐ पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु, ॐ पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु।

उत्तर में ब्राह्मण निम्न प्रकार कहें—

ॐ पुण्याहं, ॐ पुण्याहं, ॐ पुण्याहं।

फिर यजमान ब्राह्मणों से निम्न वचन कहे—

ॐ कर्त्तव्येऽस्मिन् देवी-माहात्म्य-पाठ-कर्मणि ॐ स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु, ॐ स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु, ॐ स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु।

उत्तर में ब्राह्मण निम्न प्रकार कहें—

ॐ स्वस्ति, ॐ स्वस्ति, ॐ स्वस्ति।

पुनः यजमान ब्राह्मणों से निम्न वचन कहे—

ॐ कर्त्तव्येऽस्मिन् देवी माहात्म्य-पाठ-कर्मणि ॐ ऋद्धि भवन्तो ब्रुवन्तु, ॐ ऋद्धि भवन्तो ब्रुवन्तु, ॐ ऋद्धि भवन्तो ब्रुवन्तु।

उत्तर में ब्राह्मण निम्न प्रकार कहें—

ॐ ऋध्यताम्, ॐ ऋध्यताम्, ॐ ऋध्यताम्।

इसके बाद ब्राह्मण निम्न स्वस्ति-सूक्त का तीन बार उच्चारण कर यजमान पर आशीर्वाद-रूप में अक्षत (चावल) और पुष्प छोड़ें—

ॐ सोमं राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे। आदित्यं विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिं। ॐ स्वस्ति, ॐ स्वस्ति, ॐ स्वस्ति।

यजुर्वेदी और ऋग्वेदी अपनी-अपनी शाखा के सूक्त का पाठ करें।

साक्ष्य-मन्त्र—हाथ जोड़कर निम्न मन्त्र से अनुष्ठान के साक्षी देवताओं का अभिनन्दन करे—

ॐ सूर्यः सोमो यमः कालः सन्ध्ये भूतान्यहः क्षपा।
पवनो दिक्-पतिर्भूमिराकाशं खचरामराः।
ब्राह्मं शासनमास्थाय कल्पध्वमिह सन्निधिम्॥

सङ्कल्प—ताम्र-पात्र में कुश, तिल, तुलसी, हरीतकी-फल और जल लेकर, दाएँ घुटने के बल उत्तर की ओर मुख करके बैठे और निम्न प्रकार 'देवी-माहात्म्य' के पाठ करने का सङ्कल्प करे—

विष्णुः ॐ तत् सत्। अद्यैतस्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-प्रहरार्द्धे श्रीश्वेत-वराह-कल्पे, जम्बु-द्वीपे, भरत-खण्डे, अमुक-प्रदेशे, अमुक-जनपदे, अमुक-स्थाने, अमुक-सम्वत्सरे, अमुक मासे, अमुक-पक्षे, अमुक-तिथौ, अमुक-वासरे, अमुक-गोत्र, अमुक-शर्मा (वर्मा, गुप्तो, दासो वा) स्वाभीष्ट-सिद्धि-कामः (श्रीचण्डिका-प्रीति-कामः वा)

श्रीकृष्ण-द्वैपायनाभिधान-महर्षि-वेदव्यास-प्रोक्त-जयाख्य-मार्कण्डेय-पुराणान्तर्गत—'सावर्णिः सूर्य-तनयः' इत्यारभ्य 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्त-देवी-माहात्म्य-प्रकाशक-स्तोत्रस्य सकृत्-पाठं (त्रिरावृत्ति, पञ्चावृत्ति, सप्तावृत्ति वा) सभक्त्याऽहं करिष्ये ।

परार्थ-सङ्कल्प—यदि किसी अन्य व्यक्ति के निमित्त देवी-माहात्म्य का पाठ करना है, तो 'अमुक-गोत्र अमुक-शर्मा' के स्थान पर 'अमुक-गोत्रस्य अमुक-शर्मणः (वर्मणः, गुप्तस्य, दासस्य वा)' कहना चाहिये ।

नवरात्र-पूजा में पाठ-सङ्कल्प—वासन्तिक या शारदीय नवरात्र के अवसर पर देवी-माहात्म्य का पाठ करना हो, तो उक्त सङ्कल्प में निम्न प्रकार वाक्य जोड़ लेना चाहिये—

वासन्तिक (शारदीय वा) नवरात्र-महा-पर्वणि, चैत्र (आश्विन वा) मासे, शुक्ल-पक्षे, अमुक-तिथावारभ्य महा-नवमीं (दशमीं वा) यावत् वार्षिक-वसन्त-कालीन (शरत्-कालीन वा) महा-पूजायां अमुक-गोत्रोत्पन्नो सर्वा-बाधा-विनिर्मुक्तत्व-धन--धान्य--सुतान्वितत्व-कामः (श्रीदुर्गा-प्रीति-कामः वा)······पाठं करिष्ये ।

सङ्कल्प-सूक्त—सङ्कल्प करने के बाद ईशान कोण में जल छोड़कर घण्टा बजाये और देवता के प्रति पुष्पाक्षत अर्पित कर अपने वेदानुसार सङ्कल्प-सूक्त का पाठ करे । यथा—

सामवेदीय--

ॐ देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्यासिचम् ।
उद् वा सिञ्चध्वमुप वा पृणुध्व, मादिद् वो देव ओहते ।।

यजुर्वेदीय--

ॐ यज्जाग्रतो दूरमुदेति दैवं, तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं,
तन्मे मनः शिव-सङ्कल्पमस्तु ।।

ऋग्वेदीय--

ॐ या गुं गूर्या सिनीवाली, या राका या सरस्वती ।
इन्द्राणीमह्व ऊतये, वारुणानीं स्वस्तये ।।

फिर ब्राह्मणों के प्रति कहे----

ॐ सङ्कल्पितेऽस्मिन् कर्मणि सिद्धिरस्तु ।

ब्राह्मण-गण उत्तर में कहें—

ॐ अस्तु ।

पुनः यजमान ब्राह्मणों से कहे—

ॐ अयमारम्भः शुभाय भवतु ।

उत्तर में ब्राह्मण-गण कहें--

ॐ भवतु ।

सामान्यार्घ्य-स्थापन—आसन के अग्र भाग में भूमि पर त्रिकोण-वृत्त-चतुरस्र का मण्डल बनाकर गन्ध-पुष्प से निम्न मन्त्र से उसका पूजन करे—

ॐ आधार-शक्तये नमः

फिर उस मण्डल पर 'नमः' मन्त्र से जल छिड़के और अर्घ्य-पात्र रखकर 'ॐ' मन्त्र से उसके जल में गन्ध-पुष्प छोड़कर उसमें निम्न मन्त्र से अंकुश मुद्रा द्वारा तीर्थों का आवाहन करे—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति !
नर्मदे सिन्धु कावेरि ! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

तदनन्तर उस जल के ऊपर मत्स्य-मुद्रा दिखाकर उस पर १० वार 'ॐ' का जप करे।

भूतापसारण—'फट्' मन्त्र का ७ वार जप करते हुये श्वेत सर्षप (सरसों) या अक्षत हाथ में लेकर निम्न मन्त्र का उच्चारण कर उन्हें अपने चारों ओर विखेर दे—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः ।
ये भूता विघ्न-कर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

आसन-शुद्धि—आसन पर निम्न मन्त्र से गन्ध-पुष्प छोड़े—

ॐ ह्रीं आधार-शक्तये कमलासनाय नमः ।

फिर आसन पर हाथ रख कर निम्न मन्त्रों से उसका शोधन करे—

ॐ अस्य आसन-मन्त्रस्य मेरु-पृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसनोपवेशने विनियोगः ।

मेरुपृष्ठ-ऋषये नमः शिरसि, सुतलं-छन्दसे नमः मुखे, कूर्म-देवतायै नमः हृदि, आसनोपवेशने विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका देवि! त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम् ॥

इसके बाद हाथ जोड़कर अपने बाएँ भाग में गुरुओं को, दाएँ भाग में गणेश को, ऊर्ध्व भाग में ब्रह्मा को और सन्मुख-भाग में भगवती चण्डिका को निम्न मन्त्रों से नमस्कार करे—

ॐ गुरवे नमः, ॐ परम-गुरवे नमः, ॐ परा-पर-गुरवे नमः, ॐ परमेष्ठि-गुरवे नमः।

ॐ गणेशाय नमः। ॐ ब्रह्मणे नमः।

ॐ ह्रीं चण्डिकायै नमः।

प्राणायाम—दाएँ अँगूठे से दाईं नासिका को बन्द कर श्वास खींचकर बाएँ हाथ में १६ बार 'ह्रीं'-बीज का जप करे। अनामिका व कनिष्ठा से बाईं नासिका को भी बन्द कर श्वास रोके हुये ६४ बार उक्त बीज का जप करे और फिर दाईं नासिका को खोलकर धीरे-धीरे श्वास निकालते हुये ३२ बार पुनः जप करे। इस प्रकार तीन बार करे।

कर-न्यास—

ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामाभ्यां हुं। ह्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्। ह्रः करतल-करपृष्ठाभ्यां फट्।

अङ्ग-न्यास—

ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुं। ह्रौं नेत्र-त्रयाय। वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्।

ध्यान—दुर्गा, काली, तारा, जगद्धात्री, अन्नपूर्णा आदि किसी जगदम्बा-स्वरूप का ध्यान करे। यथा—

विद्युद्-दाम-सम-प्रभां मृग-पति-स्कन्ध-स्थितां भीषणाम्,
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम्।
हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीम्,
विभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे॥

मानस-पूजा—अपनी पाठ्य पुस्तक पर पुष्प रख कर हृदय-कमल पर आसीन भगवती का ध्यान करते हुये निम्न प्रकार उनका मानसोपचारों से पूजन करे—

ॐ लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः।
ॐ हं आकाश-तत्वात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः।
ॐ यं वायु-तत्वात्मकं धूपं घ्रापयामि नमः।
ॐ रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं दर्शयामि नमः।
ॐ वं जल-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि नमः।
ॐ सं सर्व-तत्त्वात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि नमः।

विशेषार्घ्य-स्थापन—अपनी बाईं ओर त्रिकोण-मण्डल बनाकर उसके मध्य में 'हूं' लिखे। उस पर 'फट्' से प्रक्षालित त्रिपदिका-सहित शङ्ख (या पात्र) रखकर उसमें 'ह्रीं' मन्त्र से जल, गन्ध-पुष्प, दूर्वाक्षतादि डालकर निम्न मन्त्रों से गन्ध-पुष्प द्वारा पूजन करे—

मं दश-कला-व्याप्त-वह्नि-मण्डलाय नमः—त्रिपदिकायां

अं द्वादश-कला-व्याप्त-सूर्य-मण्डलाय नमः—शङ्खे (पात्रे)

उं षोडश-कला-व्याप्त-सोम-मण्डलाय नमः—जले
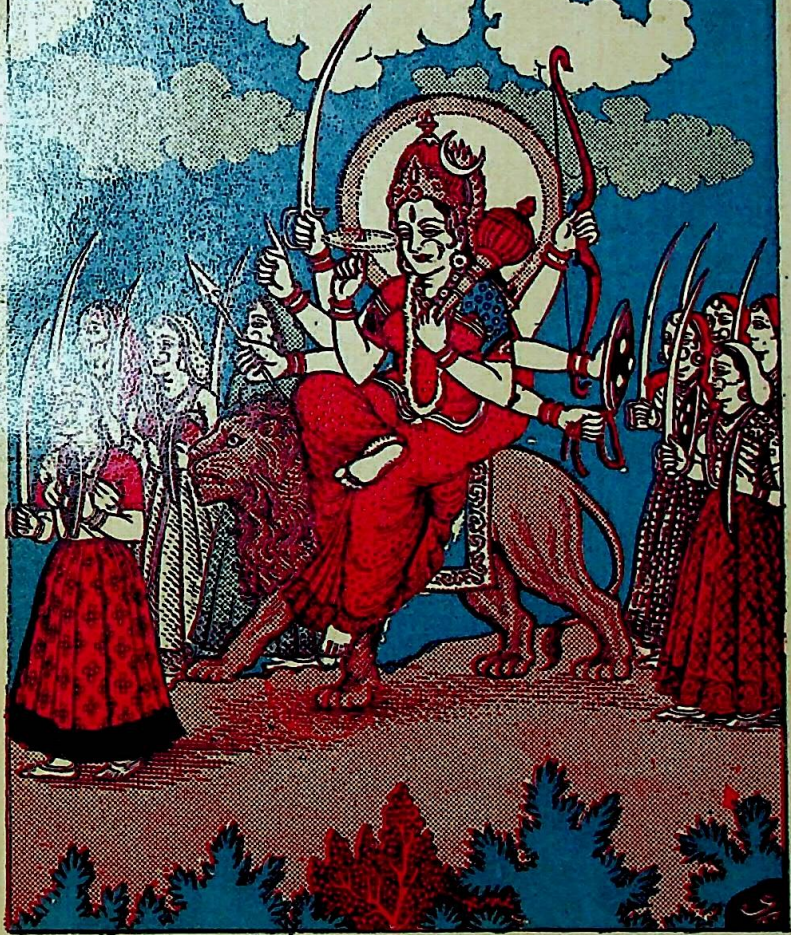
विद्युद्-दाम-सम-प्रभां मृग-पति-स्कन्ध-स्थितां भीषणाम्,
कन्याभिः करवाल-खेट-विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदासि-खेट-विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीम्,
विभ्राणामनलात्मिकां शशि-धरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥
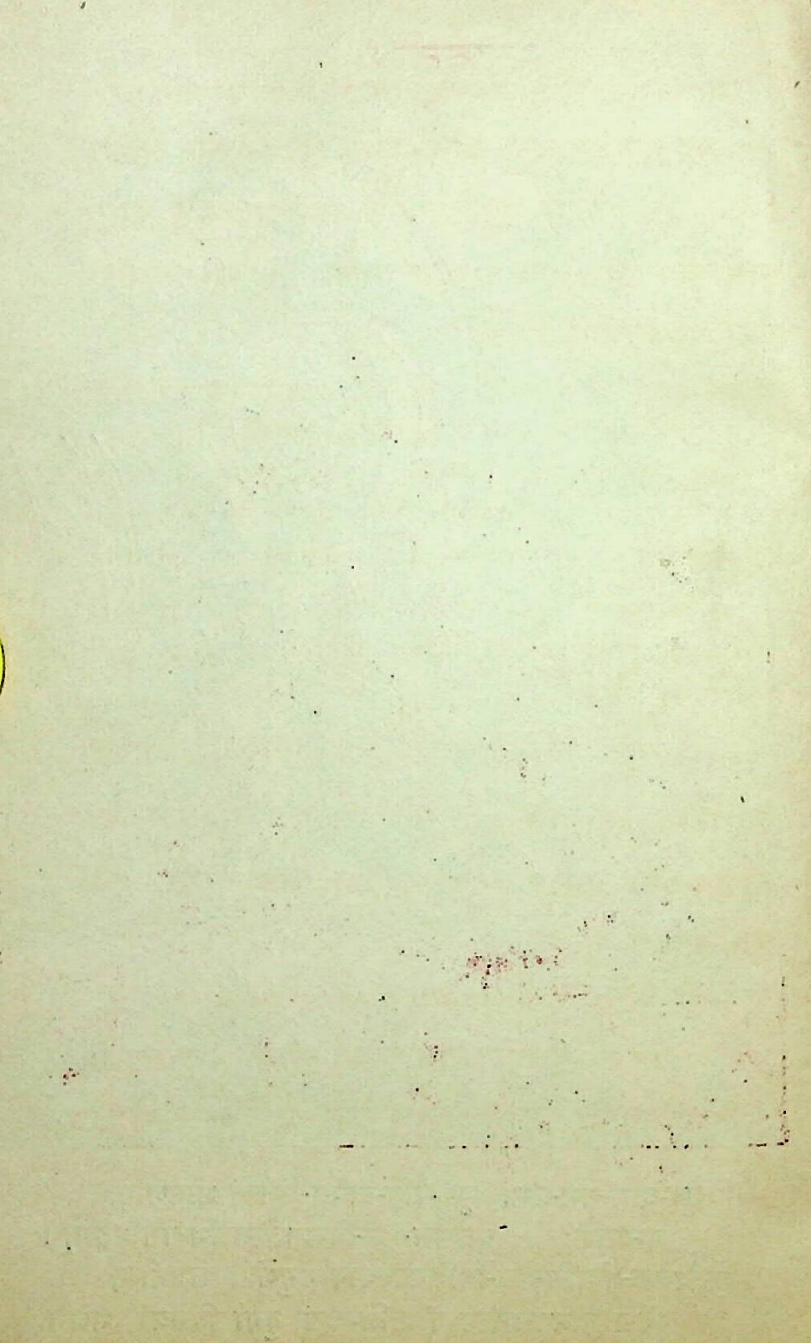
फिर निम्न मन्त्रों से उक्त शङ्ख (पात्र) में षडङ्ग-पूजन करे--

ह्रां हृदयाय नमः अग्नि-कोणे, ह्रीं शिरसे स्वाहा ईशाने, ह्रूं शिखायै वषट् नैर्ऋते, ह्रैं कवचाय हुं वायु-कोणे, ह्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट् सम्मुखे, ह्रः करतल-कर-पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट् मध्ये ।

तब शङ्ख (पात्र) में 'ॐ गङ्गे च०' इत्यादि मन्त्र से तीर्थों का आवाहन कर उसे दोनों हाथों से ढंककर 'ह्रीं' वीज का १० बार जप करे। तदनन्तर इस शङ्ख (पात्र) के जल में से कुछ जल लेकर आसन पर, अपने मस्तक और पूजा-द्रव्यों पर छिड़के। यह अर्घ्य पूजा के समाप्त होने तक सुरक्षित रखे।

आवाहन—पुनः हाथ में पुष्प लेकर, ध्यान कर, घट या पुस्तक पर उस पुष्प को रखकर भगवती का निम्न मन्त्रों से आवाहन करे—

ॐ ह्रीं चण्डिके देवि ! इहागच्छ, इहागच्छ, इह तिष्ठ, इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि, इह सन्निधेहि, इह सन्निरुध्यस्व, इह सन्निरुध्यस्व, अत्राधिष्ठानं कुरु, मम पूजां गृहाण, गृहाण ।

ॐ देवेशि ! भक्ति-सुलभे परिवार-समन्विते !
यावत् त्वां पूजयिष्यामि तावत् त्वं सुस्थिरा भव ।।

गणेशादि-पूजा—गन्ध-पुष्पादि से निम्न मन्त्रों द्वारा क्रमशः गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव, दुर्गादि का पञ्चोपचारों से पूजन करे। यथा—

एष गन्धः ॐ गणेशाय नमः, एतत् पुष्पं ॐ गणेशाय नमः, एष धूपः ॐ गणेशाय नमः, एष दीपः ॐ गणेशाय नमः, एतत् नैवेद्यं ॐ गणेशाय नमः ।

ॐ सूर्याय नमः । ॐ विष्णवे नमः । ॐ शिवाय नमः । ॐ दुर्गायै नमः । ॐ सर्व-देवताभ्यो नमः ।

पुनः भगवती का ध्यान कर मूलमन्त्र द्वारा षोडश, दश या पञ्चापचारों से देवी का पूजन करे । यथा—

एतत् पाद्यं ह्रीं ॐ चण्डिकायै नमः इत्यादि

ॐ आवरण-देवताभ्यो नमः ।

तदनन्तर निम्न गायत्री-मन्त्र का १० वार जप करे—

ॐ चण्डिकायै विद्महे, त्रिपुरायै धीमहि, तन्नो गौरी प्रचोदयात् ।

अन्त में निम्न-मन्त्र से तीन वार भगवती के प्रति पुष्पाञ्जलियाँ अर्पित करे—

ॐ एष पुष्पाञ्जलिः ह्रीं ॐ चण्डिकायै नमः

पुस्तक-पूजा—'देवी-माहात्म्य' (श्रीदुर्गा-सप्तशती) पुस्तक को आवरण-मुक्त कर उसे ताम्रादि आधार पर रखकर गन्ध-पुष्पादि द्वारा उसका पूजन करे । यथा—

एष गन्धः ॐ देवी-माहात्म्य-पुस्तकाय नमः इत्यादि

अब शापोद्धार और उत्कीलन-सम्वन्धी जप गुरुदेव के निर्देशानुसार करे । यथा—

शापोद्धार

१--सप्तशती के अनुष्ठान के पूर्व और अन्त में सात-सात वार निम्न मन्त्र का जप करे--ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिका-देव्यै शाप-नाशानुग्रहं कुरु कुरु स्वाहा !

२--अनुष्ठान के पूर्व निम्न मन्त्र का ८ वार जप करे--ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चण्डिका-देव्यै शापानुग्रहं कुरु कुरु स्वाहा।

३--अनुष्ठान के पूर्व निम्न प्रकार १८ मन्त्रों का जप करे। पहले इन मन्त्रों का विनियोग पढ़े। यथा---

ॐ अस्य श्री चण्डिकाया ब्रह्म-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शाप-विमोचन-मन्त्रस्य वशिष्ठ-नारद-सम्वाद-सामवेदाधिपति-ब्रह्माण ऋषयः, सर्वैश्वर्य-कारिणी श्रीदुर्गा देवता, चरित-त्रयं वीजं, ह्रीं शक्तिः, त्रिगुणात्म-स्वरूप-चण्डिका-शाप-विमुक्तौ मम सङ्कल्पित-कार्य-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—वशिष्ठ-नारद-सम्वाद-सामवेदाधिपति-ब्रह्माण-ऋषिभ्यो नमः शिरसि, सर्वैश्वर्य-कारिणी-श्रीदुर्गा-देवतायै नमः हृदि, चरित-त्रय-वीजाय नमः लिंगे, ह्रीं शक्तये नमः नाभौ, त्रिगुणात्म-स्वरूप-चण्डिका-शाप-विमुक्तौ मम सङ्कल्पित-कार्य-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

१ ॐ ह्रीं रीं रेतः-स्वरूपिण्यै मधु-कैटभ-मर्दिन्यै ब्रह्म-वशिष्ठ-विश्वामित्र-शापाद् विमुक्ता भव।

२ ॐ श्रीं बुद्धि-स्वरूपिण्यै महिषासुर-सैन्य-नाशिन्यै ब्रह्म०

३ ॐ रं रक्त-स्वरूपिण्यै महिषासुर-मर्दिन्यै ब्रह्म०

४ ॐ क्षुं क्षुधा-स्वरूपिण्यै देव-वन्दितायै ब्रह्म०

५ ॐ छां छाया-स्वरूपिण्यै दूत-सम्वादिन्यै ब्रह्म०

६ ॐ शं शक्ति-स्वरूपिण्यै धूम्र-लोचन-घातिन्यै ब्रह्म०
७ ॐ तृं तृषा-स्वरूपिण्यै चण्ड-मुण्ड-वध-कारिण्यै ब्रह्म०
८ ॐ क्षां शान्ति-स्वरूपिण्यै रक्त-वीज-वध-कारिण्यै ब्रह्म०
९ ॐ जां जाति-स्वरूपिण्यै निशुम्भ-वध-कारिण्यै ब्रह्म०
१० ॐ लं लज्जा-स्वरूपिण्यै शुम्भ-वध-कारिण्यै ब्रह्म०
११ ॐ शां शान्ति-स्वरूपिण्यै देव-स्तुत्यै ब्रह्म०
१२ ॐ श्रं श्रद्धा-स्वरूपिण्यै सकल-फल-दात्र्यै ब्रह्म०
१३ ॐ कां कान्ति-स्वरूपिण्यै राज-वर-प्रदायै ब्रह्म०
१४ ॐ मां मातृ-स्वरूपिण्यै अनर्गल-महिम-सहितायै ब्रह्म०
१५ ॐ ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै सं सर्वैश्वर्य-कारिण्यै ब्रह्म०
१६ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिवायै अभेद्य-कवच-रूपिण्यै ब्रह्म०
१७ ॐ क्रीं काल्यै कालि ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेद-स्वरूपिण्यै ब्रह्म०

१८ ॐ ऐं ह्रीं क्लीं महाकाली-महालक्ष्मी-महा-सरस्वती-स्वरूपिण्यै त्रिगुणात्मिकायै दुर्गा-देव्यै नमः।

उत्कीलन

१ पहले मध्यम चरित का पाठ करे। फिर प्रथम चरित का पाठ कर उत्तम चरित का पाठ करे।

२ सप्तशती के अनुष्ठान के पूर्व में २१ बार निम्न मन्त्र का जप करे—ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशती चण्डिके उत्कीलनं कुरु कुरु स्वाहा।

इस मन्त्र के बाद निम्न 'मृत-संजीवनी'-मन्त्र का ७ बार जप करे—ॐ ह्रीं ह्रीं वं वं ऐं ऐं मृत-संजीवनि विद्ये मृतमुत्थापयोत्थापय क्रीं ह्रीं ह्रीं वं स्वाहा।

३ निम्न मन्त्र का अनुष्ठान के प्रारम्भ में १०८ बार जप करे—ॐ श्रीं श्रीं क्लीं हूं ॐ ऐं क्षोभय मोहय उत्कीलय उत्कीलय उत्कीलय ठं ठं।

४ सप्तशती का पाठ इस क्रम से करे—पहले अध्याय १३, फिर अध्याय १, १२, २, ११, ३, १०, ४, ९, ५, ८, ६ का एक-एक बार पाठ कर अन्त में ७ वें अध्याय का दो बार पाठ करे।

५ अनुष्ठान के पूर्व निम्न मन्त्रों में से किसी एक का २१ बार पाठ करे–(i) ह्स्रां ह्स्रीं क्षरौं ऐं क्षमल वर फ्रीं वमल वर फ्रीं ॐ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः उत्कीलय उत्कीलय स्वाहा।

(ii) ॐ ह्रीं ह्रीं क्लीं क्रौं ॐ ऐं क्षोभय क्षोभय मोहय मोहय अमल वर फ्रीं स्फ्रां स्फ्रीं उत्कीलय उत्कीलय स्वाहा।

६ तीन व्याहृतियों से पुटित कर सप्तशती का पाठ करे।

उपसंहार

तदनन्तर विधिपूर्वक स्वीकृत क्रम के अनुसार अर्गला, कीलक, कवचादि का पाठ करे।

फिर 'ह्रीं' मन्त्र से प्राणायाम कर 'देवी-माहात्म्य' का पाठ प्रारम्भ करे। पाठ पूर्व-निश्चित क्रम के अनुसार करे। प्रत्येक अध्याय के पूर्ण होने पर घण्टा बजाये। 'देवी-माहात्म्य' का सम्पूर्ण पाठ हो जाने पर हाथ में जल लेकर निम्न मन्त्र से देवी के बाएँ हाथ में उसे समर्पित करे–

ॐ गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्-कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि! त्वत्-प्रसादात् सुरेश्वरि॥

इसके बाद स्वीकृत पाठ-क्रम के अनुसार देवी-सूक्त, रहस्य-त्रयादि का पाठ कर आरार्तिक आदि करे। यथा–

आरार्तिक—'ह्रीं' मन्त्र से पुनः प्राणायाम कर आरति करे। आरति के प्रत्येक द्रव्य को देवता के पैरों के प्रति ४ बार, नाभि-देश के प्रति २ बार, मुख-मण्डल के प्रति ३ बार और सारे शरीर के प्रति ७ बार प्रदर्शित करे। आरति के द्रव्य सात हैं। यथा--१ दीप-माला अर्थात् पञ्च-प्रदीप, २ कर्पूर, ३ जल-पूर्ण शङ्ख, ४ धौत वस्त्र, ५ दर्पण, ६ पञ्च-पल्लव या विल्व-पत्र और ७ चामर।

प्रणाम—निम्न मन्त्र से भगवती को साष्टाङ्ग प्रणाम करे—

ॐ सर्व-मङ्गल-माङ्गल्ये ! शिवे सर्वार्थ-साधिके !
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥

दक्षिणा—निम्न मन्त्र से दक्षिणा का पूजन करे---

एते गन्ध-पुष्पे ॐ एतस्मै काञ्चन-मूल्याय नमः। एते गन्ध-पुष्पे एतदधिपतये ॐ विष्णवे नमः। एते गन्ध-पुष्पे एतत् सम्प्रदानाय ॐ चण्डिकायै नमः।

फिर दाएँ हाथ में कुश और फल लेकर उसे बाएँ हाथ से ढँककर निम्न मन्त्र से दक्षिणा को प्रदान करे---

विष्णुः ॐ तत् सत् इत्यादि.... कामनया कृतैतद् देवी-माहात्म्य-प्रकाशक-स्तोत्र-पाठ-कर्मणः साङ्गतार्थं दक्षिणामिदं काञ्चन-मूल्यं श्रीविष्णु-दैवतमहं श्री चण्डिकायै सम्प्रददे।

अच्छिद्रावधारण---हाथ जोड़कर निम्न वाक्य कहे—

ॐ कृतैतद् देवी-माहात्म्य-पाठ-कर्माच्छिद्रमस्तु ।

ब्राह्मण लोग कहें---

ॐ अस्तु ।

वैगुण्य-समाधान---अनुष्ठान-काल में कोई त्रुटि हुई हो, उसके निवारणार्थ निम्न वाक्य का उच्चारण कर श्री विष्णु का स्मरण करे---

विष्णुः ॐ तत् सत् इत्यादि......श्री अमुक-देव शर्मा कृतेऽस्मिन् कर्मणि यद् वैगुण्यं जातं तद्-दोष-प्रशमनाय श्रीविष्णु-स्मरणमहं करिष्ये ।

अन्त में 'तद् विष्णोः' इत्यादि का पाठ कर 'ॐ विष्णु' का १० वार जप करे । अन्त में एक चुल्लू जल लेकर निम्न मन्त्र से उसे समर्पित करे---

ॐ प्रीयतां पुण्डरीकाक्षः सर्व-यज्ञेश्वरो हरिः । तस्मिंस्तुष्टे जगत् तुष्टं प्रीणितं जगत् । एतत् कर्म ॐ अस्तु ।

विसर्जन--घट-स्थापन करके यदि अनुष्ठान किया गया हो, तो घट का विसर्जन करे । यथा---'ॐ चण्डिके देवि ! क्षमस्व' कहकर घट पर जल छोड़कर उसे हिलावे, फिर संहार-मुद्रा से घट के एक निर्माल्य-पुष्प को लेकर सूंघे और भावना करे कि देवता हृदय में आ गया है । फिर हाथ धोकर ईशान-कोण में त्रिकोण-मण्डल वनाकर उस पर निम्न मन्त्र से कुछ निर्माल्य विसर्जित करे---

ॐ शेषिकायै नमः ।

संक्षिप्त पूजा-पद्धति

स्नानादि कर अपने पूजा-स्थान पर आसन पर पूर्व या उत्तर मुख होकर बैठे। विस्तृत पूजा-पद्धति के अनुसार 'सामान्यार्घ्य-स्थापन' (पृष्ठ १५) कर उसके जल से निम्न मन्त्रों से चार बार आचमन करे–

ॐ ऐं आत्म-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ ह्रीं विद्या-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ क्लीं शिव-तत्वं शोधयामि नमः स्वाहा।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं सर्व-तत्त्वं शोधयामि नमः स्वाहा।

इसके वाद पृष्ठ १७ के अनुसार तीन वार प्राणायाम कर पृष्ठ १३ के अनुसार सङ्कल्प करे।

फिर अपने सम्मुख एक दीपक जलाकर किसी आधार पर स्थापित करे।

उस दीपक को ज्योति में भगवती दुर्गा का **'विद्युद्-दाम-सम-प्रभां'** इत्यादि ध्यान कर पञ्चोपचारों (१ रक्त-चन्दन-मिश्रित अक्षत, २ रक्त-पुष्प, ३ धूप, ४ दीप, ५ नैवेद्य) से उनका पूजन करे।

फिर चण्डी (सप्तशती) का पाठ **'ॐ सावर्णिः सूर्य-तनयो'** से लेकर **'सावर्णिर्भविता मनुः ॐ'** तक करे। अथवा 'दिव्य' या 'आर्ष' पाठ-क्रमों में से किसी एक स्वीकृत क्रम से पाठ करे।

अन्त में **'ॐ गुह्याति गुह्य'** इत्यादि मन्त्र से जप-समर्पण कर क्षमा-प्रार्थना करे---

ॐ यदक्षरं परि-भ्रष्टं मात्रा-हीनं तु यद् भवेत्।
तत् सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ॥

अर्गला-स्तोत्र

विनियोग—ॐ अस्य अर्गला-स्तोत्र-मन्त्रस्य विष्णुः ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहालक्ष्मी चण्डिका देवता, नवार्ण-मन्त्र शक्तिः, मन्त्रोदिता देव्यः बीजानि, श्रीमहा-लक्ष्मी-चण्डिका-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे सकल-दुरित-निवारणे च पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—विष्णु-ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहा-लक्ष्मी-चण्डिका-देवतायै नमः हृदि, नवार्ण-मन्त्र-शक्तये नमः नाभौ, मन्त्रोदिता-देव्यः बीजेभ्यो नमः लिङ्गे, श्रीमहा-लक्ष्मी-चण्डिका-प्रसाद-सिद्ध्यर्थे सकल-दुरित-निवारणे च पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

ध्यान—

शाकम्भरी नील-वर्णा नीलोत्पल-विलोचना।
गम्भीर-नाभिस्त्रिवली-विभूषित-तनूदरी ॥ १

सुकर्कश-समोत्तुङ्ग-वृत्त-पीन-घन-स्तनी ।
मुष्टिं शिली-मुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥ २

पुष्प-पल्लव-मूलादि-फलाढ्यं शाक-सञ्चयम्।
काम्यानन्त-रसैर्युक्तं क्षुत्-तृट्-मृत्यु-जरा-पहम् ॥ ३

कार्मुकं च स्फुरत् कान्तिं बिभ्रती परमेश्वरी।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्त्तिता ॥ ४

विशोका दुष्ट-दमनी शमनी दुरितापदाम्।
उमा गौरी सती चण्डी कालिका साऽपि पार्वती ॥ ५

शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायन् जपन् सम्पूजयन् नमन्।
अक्षय्यमश्नुते नित्यमन्न-पानामृतं फलम् ॥ ६

ॐ नमश्चण्डिकायै

॥ ॐ मार्कण्डेय उवाच ॥

जय त्वं देवि चामुण्डे! जय भूतार्ति-हारिणि !
जय सर्व-गते देवि ! काल-रात्रि ! नमोऽस्तु ते॥ १
जयन्ती मङ्गला काली भद्र-काली कपालिनी ।
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते॥ २
मधु-कैटभ-विद्रावि-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ३
महिषासुर-सैन्यान्त-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ४
महिषासुर-निर्णाश-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ५
धूम्रलोचन-दर्पान्त-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ६
चण्ड-मुण्ड-प्रमथन-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ७
रक्त-वीज-कुलोच्छेद-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ८
निशुम्भ-प्राण-संहार-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ९
शुम्भ-राक्षस-संहार-विधात्रि वरदे ! नमः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १०

वन्दितांघ्रि-युगे देवि ! सर्व-सौभाग्य-दायिनि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ ११

अचिन्त्य-रूप-चरिते ! सर्व-शत्रु-विनाशिनि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १२

नतेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके ! दुरितापहे !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १३

स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधि-नाशिनि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १४

चण्डिके ! सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १५

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १६

विधेहि देवि ! कल्याणं, विधेहि परमां श्रियम् ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १७

विधेहि द्विषतां नाशं, विधेहि बलमुच्चकैः ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १८

सुरासुर-शिरो-रत्न-निघृष्ट-चरणेऽम्बिके !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ १९

विद्या-वन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मी-वन्तं च मां कुरु ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ २०

देवि ! प्रचण्ड-दोर्दण्ड-दैत्य-दर्प-विनाशिनि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ॥ २१

प्रचण्ड-दैत्य-दर्पघ्न चण्डिके ! प्रणताय मे ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।। २२
चतुर्भुजे चतुर्वक्त्र-संस्तुते परमेश्वरि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।। २३
कृष्णेन संस्तुते देवि ! शश्वद् भक्त्या सदाऽम्बिके ।
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।। २४
हिमाचल-सुता-नाथ-संस्तुते ! परमेश्वरि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।। २५
इन्द्राणी-पति-सद्भाव-पूजिते ! परमेश्वरि !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।। २६
देवि ! भक्त-जनोद्दाम-दत्ताऽनन्दोदयेऽम्बिके !
रूपं देहि, जयं देहि, यशो देहि, द्विषो जहि ।। २७
पत्नीं मनोरमां देहि मनो-वृत्तानुसारिणीम् ।
तारिणीं दुर्ग-संसार-सागरस्य कुलोद्भवाम् ॐ ।। २८

फल-श्रुति

इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महा-स्तोत्रं पठेन्नरः ।
सप्तशतीं समाराध्य वरमाप्नोति सुदुर्लभम् ।। २९
अर्गलं पाप-जातस्य दारिद्र्यस्य तथाऽर्गलम् ।
इदमादौ पठित्वा तु पश्चात् श्रीचण्डिकां पठेत् ।। ३०
।। मार्कण्डेय-पुराणे देव्या अर्गला-स्तोत्रम् ॐ तत् सत् ।।

कीलक-स्तोत्र

विनियोग—ॐ अस्य श्रीकीलक-स्तोत्र-मन्त्रस्य शिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहा-सरस्वती-चण्डिका देवता, मन्त्रोदिता देव्यः बीजं, नवार्ण मन्त्र शक्तिः, श्रीचण्डिका-प्रीतये कल्पोक्त-फल-प्राप्तये उत्कीलनार्थे च पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—शिव-ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहा-सरस्वती-चण्डिका-देवतायै नमः हृदि, मन्त्रोदिता-देव्यः बीजाय नमः लिङ्गे, नवार्ण-मन्त्र-शक्तये नमः नाभौ, श्रीचण्डिका-प्रीतये कल्पोक्त-फल-प्राप्तये उत्कीलनार्थे च पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

ध्यान—

शाकम्भरी नील-वर्णा नीलोत्पल-विलोचना ।
गम्भीर-नाभिस्त्रिवली-विभूषित - तनूदरी ॥ १

सुकर्कश-समोत्तुङ्ग-वृत्त-पीन-घन-स्तनी ।
मुष्टि शिलो-मुखापूर्णा कमलं कमलालया ॥ २

पुष्प-पल्लव-मूलादि-फलाढ्यं शाक-सञ्चयम् ।
काम्यानन्त-रसैर्युक्तं-क्षुत्-तृट्-मृत्यु-जरा-पहम् ॥ ३

कार्मुकं च स्फुरत् कान्तिं बिभ्रती परमेश्वरी ।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्त्तिता ॥ ४

विशोका दुष्ट-दमनी शमनी दुरितापदाम् ।
उमा गौरी सती चण्डी कालिका साऽपि पार्वती ॥ ५

शाकम्भरी स्तुवन् ध्यायन् जपन् सम्पूजयन् नमन् ।
अक्षय्यमश्नुते नित्यमन्न-पानामृतं फलम् ॥ ६

❋ ॐ नमश्चण्डिकायै ❋

॥ ॐ मार्कण्डेय उवाच ॥

विशुद्ध-ज्ञान-देहाय त्रि-वेदी-दिव्य-चक्षुषे ।
श्रेयः-प्राप्ति-निमित्ताय नमः सोमार्द्ध-धारिणे ॥ १

फल-श्रुति

सर्वमेतद् विजानीयान्मन्त्राणामपि कीलकम् ।
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जप्य-तत्परः ॥ २
सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि कर्माणि सकलान्यपि ।
एतेन स्तुवतां देवीं स्तोत्र-वृन्देन भक्तितः ॥ ३
न मन्त्रो नौषधं तस्य न किञ्चिदपि विद्यते ।
विना जप्येन सिद्ध्यन्ति सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥ ४
समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोके शङ्कामिमां हरः ।
कृत्वा निमन्त्रयामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥ ५
स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुह्यं चकार सः ।
स प्राप्नोति सुपुण्येन तां यथा-वन्निमन्त्रणाम् ॥ ६
सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेव न संशयः ।
कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥ ७
ददाति प्रति-गृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति ।
इत्थं रूपेण कीलेन महा-देवेन कीलितम् ॥ ८
यो निष्कीलां विधायैनां चण्डीं जपति नित्यशः ।
स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥ ९

न चैवापाटवं तस्य भयं क्वापि न जायते ।
नाप-मृत्यु-वशं याति मृते च मोक्षमाप्नुयात् ॥ १०

ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत ह्यकुर्वाणो विनश्यति ।
ततो ज्ञात्वैव सम्पूर्णमिदं प्रारभ्यते बुधैः ॥ ११

सौभाग्यादि च यत् किञ्चिद् दृश्यते ललना-जने ।
तत् सर्वं तत्-प्रसादेन तेन जप्यमिदं शुभम् ॥ १२

शनैस्तु जप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे सम्पत्तिरुच्चकैः ।
भवत्येव समग्राऽपि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥ १३

ऐश्वर्यं तत्-प्रसादेन सौभाग्यारोग्य-सम्पदः ।
शत्रु-हानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥ १४

प्रथमं पठते देव्या ह्यग्रे भूत्वा शुचिस्तथा ।
कीलकेयं समाख्याता पश्चात् सप्तशती-स्तुतिः ॥ १५

निष्कीलकं ततः कृत्वा ख्याता निष्कील-कारणात् ।
देव्याश्चैव महा-भक्त्या तेनाभीष्ट-फला भवेत् ॥ १६

यः स्तोत्रमेतदनुवासरमम्बिकायाः,
श्रेयस्करं पठति वा यदि वा शृणोति ।
स ह्यैहिकं फलमवाप्य विराजतेऽसौ,
जायेत् स प्रिय-तमो मदिरेक्षणानाम् ॐ ॥ १७

॥ देव्याः कीलक-स्तोत्रं ॐ तत् सत् ॥

देवी-कवच

विनियोग—ॐ अस्य श्रीदेव्याः कवचस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, ख्फ्रें चामुण्डाख्या महालक्ष्मीः देवता, ह्रीं ह्स्रौं ह्स्क्लीं ह्रीं हसौं अङ्ग-न्यस्ता देव्यः शक्तयः, ऐं ह्स्रीं ह्क्लीं श्रीं ह्स्र्यूं क्ष्म्रौं स्फ्रें बीजानि, श्रीमहालक्ष्मी-प्रीतये सर्व-रक्षार्थे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—ब्रह्मा-ऋषये नमः शिरसि, अनु-ष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, ख्फ्रें चामुण्डाख्या-महालक्ष्मीः-देवतायै नमः हृदि, ह्रीं—५ अङ्ग-न्यस्ता-देव्यः-शक्तिभ्यो नमः नाभौ, ऐं-७ बीजेभ्यो नमः लिङ्गे, श्रीमहालक्ष्मी-प्रीतये सर्व-रक्षार्थे च पाठे विनियोगाय नमः सर्वांगे।

ध्यान—

रक्ताम्बरा रक्त-वर्णा रक्त-सर्वाङ्ग-भूषणा।
रक्तायुधा रक्त-नेत्रा रक्त-केशाऽति-भीषणा॥ १
रक्त-तीक्ष्ण-नखा रक्त-रसना रक्त-दन्तिका।
पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजेज्जनम्॥ २
वसुधेव विशाला सा सुमेरु-युगल-स्तनी।
दीर्घौ लम्बावति-स्थूलौ तावतीव मनोहरौ॥ ३
कर्कशावति-कान्तौ तौ सर्वानन्द-पयोनिधी।
भक्तान् सम्पाययेद् देवी सर्व-काम-दुघौ स्तनौ॥ ४
खड्गं पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च विभर्त्ति सा।
आख्याता रक्त-चामुण्डा देवी योगेश्वरीति च॥ ५
अनया व्याप्तमखिलं जगत् स्थावर-जङ्गमम्।
इमां यः पूजयेद् भक्तो स व्याप्नोति चराचरम्॥ ६

॥ ॐ मार्कण्डेय उवाच ॥

ॐॐॐ यद् गुह्यं परमं लोके सर्व-रक्षा-करं नृणाम् ।
यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ १

॥ ब्रह्मोवाच ॥

अस्ति गुह्य-तमं विप्र ! सर्व-भूतोपकारकम् ।
देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महा-मुने ॥ २
प्रथमं शैल-पुत्रीति द्वितीयं ब्रह्म-चारिणी ।
तृतीयं चण्ड-घण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥ ३
पञ्चमं स्कन्द-मातेति षष्ठं कात्यायनी तथा ।
सप्तमं काल-रात्रीति महा-गौरीति चाष्टमम् ॥ ४
नवमं सिद्धि-दात्रीति नव-दुर्गाः प्रकीर्त्तिताः ।
उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥ ५
अग्निना दह्य-मानास्तु शत्रु-मध्य-गता रणे ।
विषमे दुर्गमे वाऽपि भयार्त्ताः शरणं गताः ॥ ६
न तेषां जायते किञ्चिदशुभं रण-सङ्कटे ।
आपदं न च पश्यन्ति शोक-दुःख-भयं नहि ॥ ७
यैस्तु भक्त्या स्मृता नित्यं तेषां वृद्धिः प्रजायते ।
प्रेत-संस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना ॥ ८
ऐन्द्री गज-समारूढ़ा वैष्णवी गरुड़ासना ।
नारसिंही महा-वीर्या शिव-दूती महा-बला ॥ ९
माहेश्वरी वृषारूढ़ा कौमारी शिखि-वाहना ।
ब्राह्मी हंस-समारूढ़ा सर्वाभरण-भूषिता ॥ १०

लक्ष्मीः पद्मासना देवी पद्म-हस्ता हरि-प्रिया ।
श्वेत-रूप-धरा देवी ईश्वरी वृष-वाहना ।। ११

इत्येता मातरः सर्वाः सर्व-योग-समन्विताः ।
नानाभरण-शोभाढचा नाना-रत्नोप-शोभिताः ।। १२

श्रेष्ठैश्च मौक्तिकैः सर्वा दिव्य-हार-प्रलम्बिभिः ।
इन्द्र-नीलैर्महा-नीलैः पद्म-रागैः सुशोभनैः ।। १३

दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोध-समाकुलाः ।
शङ्खं चक्रं गदां शक्तिं हलं च मूषलायुधम् ।। १४

खेटकं तोमरं चैव परशुं पाशमेव च ।
कुन्तायुधं च खड्गं च शार्ङ्गायुधमनुत्तमम् ।। १५

दैत्यानां देह-नाशाय भक्तानामभयाय च ।
धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ।। १६

नमस्तेऽस्तु महा-रौद्रे महा-घोर-पराक्रमे ।
महा-बले ! महोत्साहे ! महा-भय-विनाशिनि ।। १७

त्राहि मां देवि दुष्प्रेक्ष्ये ! शत्रूणां भय-वर्द्धिनि !
प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्नि-देवता ।। १८

दक्षिणे चैव वाराही नैऋत्यां खड्ग-धारिणी ।
प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद् वायव्यां वायु-देवता ।। १९

उदीच्यां दिशि कौबेरी ऐशान्यां शूल-धारिणी ।
ऊर्ध्वं ब्राह्मी च मां रक्षेदधस्ताद् वैष्णवी तथा ।। २०

एवं दश दिशो रक्षेच्चामुण्डा शव-वाहना ।
जया मामग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ।। २१

अजिता वाम-पार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता ।
शिखां मे द्योतिनो रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ।। २२

माला-धरी ललाटे च भ्रुवोर्मध्ये यशस्विनी ।
नेत्रयोश्चित्र-नेत्रा च यम-घण्टा तु पार्श्वके ।। २३

शङ्खिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वार-वासिनी ।
कपोलौ कालिका रक्षेत् कर्ण-मूले च शङ्करी ।। २४

नासिकायां सुगन्धा च उत्तरौष्ठे च चर्चिका ।
अधरे चामृत-कला जिह्वायां च सरस्वती ।। २५

दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठ-मध्ये तु चण्डिका ।
घण्टिकां चित्र-घण्टा च महा-माया च तालुके ।। २६

कामाख्या चिबुकं रक्षेद् वाचं मे सर्व-मङ्गला ।
ग्रीवायां भद्र-काली च पृष्ठ-वंशे धनुर्द्धरी ।। २७

नील-ग्रीवा बहिः-कण्ठे नलिकां नल-कूबरी ।
स्कन्धयोः खड्गिनी रक्षेद् बाहू मे वज्र-धारिणी ।। २८

हस्तयोर्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चांगुलीषु च ।
नखान् सुरेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ. रक्षेन्नरेश्वरी ।। २९

स्तनौ रक्षेन्महा-देवी मनः-शोक-विनाशिनी ।
हृदये ललिता देवी उदरे शूल-धारिणी ।। ३०

नाभौ च कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा ।
मेढ्रं रक्षतु दुर्गन्धा पायुं मे गुह्य-वासिनी ।। ३१

कट्यां भगवती रक्षेदूरू मे घन-वासिनी ।
जङ्घे महा-बला रक्षेज्जानू माधव-नायिका ।। ३२

गुल्फयोर्नारसिंही च पाद-पृष्ठे च कौषिकी ।
पादांगुलीः श्रीधरी च तलं पाताल-वासिनी ।। ३३

नखान् दंष्ट्रा कराली च केशांश्चैवोर्ध्व-केशिनी ।
रोम-कूपानि कौमारी त्वचं योगेश्वरी तथा ।। ३४

रक्तं मांसं वसां मज्जामस्थि मेदश्च पार्वती ।
अन्त्राणि काल-रात्री च पित्तं च मुकुटेश्वरी ।। ३५

पद्मावती पद्म-कोषे कक्षे चूडामणिस्तथा ।
ज्वाला-मुखी नख-ज्वालामभेद्या सर्व-सन्धिषु ।। ३६

शुक्रं ब्रह्माणी मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा ।
अहङ्कारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्म-धारिणी ।। ३७

प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम् ।
वज्र-हस्ता तु मे रक्षेत् प्राणान् कल्याण-शोभना ।। ३८

रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी ।
सत्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ।। ३९

आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षन्तु मातरः ।
यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च सदा रक्षतु वैष्णवी ।। ४०

गोत्रमिन्द्राणी मे रक्षेत् पशून् रक्षेच्च चण्डिका ।
पुत्रान् रक्षेन्महा-लक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ।। ४१

धनं धनेश्वरी रक्षेत् कौमारी कन्यकां तथा ।
पन्थानं सुपथा रक्षेन्मार्गं क्षेमङ्करी तथा रक्षेद् ।। ४२

राज-द्वारे महा-लक्ष्मी विजया सर्वतः स्थिता ।
रक्षेन्मे सर्व-गात्राणि दुर्गा ! दुर्गाप-हारिणी ।। ४३

रक्षा-हीनं तु यत् स्थानं वर्जितं कवचेन च।
सर्वं रक्षतु मे देवी जयन्ती पाप-नाशिनी ।। ४४

फल-श्रुति

सर्व-रक्षा-करं पुण्यं कवचं सर्वदा जपेत्।
इदं रहस्यं विप्रर्षे! भक्त्या तव मयोदितम् ।। ४५
देव्यास्तु कवचेनैवमरक्षित–तनुः सुधीः ।
पदमेकं न गच्छेत् तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः ।। ४६
कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति।
तत्र तत्रार्थ-लाभः स्याद् विजयः सार्व-कालिकः ।। ४७
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम्।
परमैश्वर्यमतुलं प्राप्नोत्यविकलः पुमान् ।। ४८
निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः।
त्रैलोक्ये च भवेत् पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ।। ४९
इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम्।
यः पठेत् प्रयतो नित्यं त्रि-सन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ।। ५०
देवी वश्या भवेत् तस्य त्रैलोक्ये चापराजितः।
जीवेद् वर्ष-शतं साग्रमप-मृत्यु-विवर्जितः ।। ५१
नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूता-विस्फोटकादयः।
स्थावरं जङ्गमं वापि कृत्रिमं वापि यद् विषम् ।। ५२
अभिचाराणि सर्वाणि मन्त्र-यन्त्राणि भू-तले।
भूचराः खेचराश्चैव कुलजाश्चोपदेशजाः ।। ५३

सहजाः कुलिका नागा डाकिनी शाकिनी तथा ।
अन्तरीक्ष-चरा घोरा डाकिन्यश्च महा-रवाः ॥ ५४

ग्रह-भूत-पिशाचाश्च यक्ष-गन्धर्व-राक्षसाः ।
ब्रह्म-राक्षस-वेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ॥ ५५

नश्यन्ति दर्शनात् तस्य कवचेनावृतो हि यः ।
मानोन्नतिर्भवेद् राज्ञस्तेजो-वृद्धिः परा भवेत् ॥ ५६

यशो-वृद्धिर्भवेद् पुंसां कीर्ति-वृद्धिश्च जायते ।
तस्माज्जपेत् सदा भक्त्या कवचं कामदं मुने ॥ ५७

जपेत् सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरः ।
निर्विघ्नेन भवेत् सिद्धिश्चण्डी-जप-समुद्भवा ॥ ५८

यावद् भू-मण्डलं धत्ते स-शैल-वन-काननम् ।
तावत् तिष्ठति मेदिन्यां जप-कर्तुर्हि सन्ततिः ॥ ५९

देहान्ते परमं स्थानं यत् सुरैरपि दुर्लभम् ।
सम्प्राप्नोति मनुष्योऽसौ महा-माया-प्रसादतः ॥ ६०

तत्र गच्छति भक्तोऽसौ पुनरागमनं न हि ।
लभते परमं स्थानं शिवेन सह मोदते ॐ ॐ ॐ ॥ ६१

वाराह-पुराणे श्रीहरि-हर-ब्रह्म-विरचितं
देव्याः कवचम् ॥

ॐ नारायणाय नमः, ॐ नरोत्तमाय नमः, ॐ देव्यै नमः,
ॐ सरस्वत्यै नमः ॐ वेदव्यासाय नमः, ॐ ब्रह्मणे नमः,
ॐ ब्राह्मणेभ्यो नमः ॥ ॐ तत्सत् ॥

रात्रि-सूक्त—वैदिक

विनियोग—ॐ अस्य श्रीरात्रि-सूक्तस्य कुशिकः ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीकाल-रात्रिः देवता, श्रीजगदम्बा-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—कुशिक-ऋषये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीकाल-रात्रि-देवतायै नमः हृदि, श्री जगदम्बा-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

ध्यान—

एक-वेणी जपाकर्ण-पूरा नग्ना खर-स्थिता ।
लम्वोष्ठी कर्णिका कर्णी तैलाभ्यक्त-शरीरिणी ॥ १ ॥

वाम-पादोल्लसल्लोह-लता-कण्टक-भूषणा ।
वर्धन्-मूर्ध-ध्वजा कृष्णा काल-रात्रिर्भयङ्करी ॥ २ ॥

व्याघ्र-चर्म-परीधाना कण्ट-माला-विभूषिता ।
वामे खड्गं च वज्रं च दक्षिणे च वराभयौ ॥ ३ ॥

विभ्रती दिव्य-रूपं च रक्त-वस्त्रोत्तरीयका ।
सप्तमी दुर्गमा प्रोक्ता काल-रात्रि! नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥

ॐ रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः ।
विश्वा अधि श्रियोऽधित ॥ १ ॥

ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः ।
ज्योतिषा बाधते तमः ॥ २ ॥

निरु स्वसारमस्कृतोषसं देव्यायती ।
अपेदु हासते तमः ॥ ३ ॥

सा नो अद्य यस्या वयं नि ते यामन्न विक्ष्महि ।
वृक्षेण वर्सात वयः ॥ ४ ॥
नि ग्रामासो अविक्षत नि पद्वन्तो नि पक्षिणः ।
नि श्येनासश्चिदर्थिनः ॥ ५ ॥
यावया वृक्यं वृकं यवय स्तेनमूर्म्ये ।
अथा नः सुतरा भव ॥ ६ ॥
उप मा पेपिशत्तमः कृष्णं व्यक्तमस्थित ।
उष ऋणेव यातय ॥ ७ ॥
उप ते गा इवाकरं वृणीष्व दुहितर्दिवः ।
रात्रि स्तोमं न जिग्युषे ॐ ॥ ८ ॥

रात्रि-सूक्त (स्मार्त्त)

विनियोग–ॐ अस्य श्रीरात्रि-सूक्तस्य ब्रह्मा ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीकाल-रात्रिः देवता, श्रीचण्डिका-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास–ब्रह्मा-ऋषये नमः शिरसि, अनु-ष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीकाल-रात्रि-देवतायै नमः हृदि, श्रीचण्डिका-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

ध्यान–(देखिए 'रात्रि-सूक्त---वैदिक')

ॐ ब्रह्मोवाच

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् ।
स्तौमि निद्रां भगवतीं विष्णोरतुल-तेजसः ॥ १

[देखिए पृष्ठ ५५, श्लोक ७२ से ८७ तक पाठ करें]

नवार्ण-जप-विधि

विनियोग—ॐ अस्य श्रीनवार्ण-मन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः, गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् छन्दांसि, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः, नन्दा-शाकम्भरी-भीमाः शक्तयः, रक्तदन्तिका-दुर्गा-भ्रामर्यो बीजानि, अग्नि-वायु-सूर्याः तत्त्वानि, ऋग्-यजुः-सामानि स्वरूपाणि, ऐं बीजं, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकं, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास--ब्रह्म-विष्णु-रुद्रेभ्यो ऋषिभ्यो नमः शिरसि, गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्-छन्देभ्यो नमः मुखे, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवताभ्यो नमः हृदि, ऐं बीजाय नमः गुह्ये, ह्रीं शक्तये नमः पादयोः, क्लीं कीलकाय नमः नाभौ, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी--महासरस्वती--प्रीत्यर्थं जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास—ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः, ॐ क्लीं मध्यमाभ्यां नमः, ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः, ॐ विच्चे कनिष्ठाभ्यां नमः, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।

षडङ्ग-न्यास--ॐ ऐं हृदयाय नमः, ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा, ॐ क्लीं शिखायै वषट्, ॐ चामुण्डायै कवचाय हुं, ॐ विच्चे नेत्र-त्रयाय वौषट्, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्।

अक्षर-न्यास—ॐ ऐं नमः शिखायां, ॐ ह्रीं नमः दक्ष-नेत्रे, ॐ क्लीं नमः वाम-नेत्रे, ॐ चां नमः दक्ष-कर्णे, ॐ मुं नमः वाम-कर्णे ॐ डां नमः दक्ष-नासायां, ॐ यैं नमः वाम-नासायां, ॐ विं नमः मुखे, ॐ च्चें नमः गुह्ये।

व्यापक-न्यास---मूल-मन्त्र का उच्चारण करते हुये आठ वार शिखा से नख तक और नख से शिखा तक सारे शरीर पर दोनों हथेलियों को फिरावे।

दिङ्-न्यास--ॐ ऐं प्राच्यै नमः, ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः, ॐ ह्रीं दक्षिणायै नमः, ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः, ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः, ॐ क्लीं वायव्यै नमः, ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः, ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः, ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः।

ध्यान---

खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः,
शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्ग-भूषावृताम्।
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाद-दशकां सेवे महा-कालिकाम्,
यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्॥ १॥
अक्ष-स्रक्-परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकाम्,
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म-जलजं घण्टां सुरा-भाजनम्।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननाम्,
सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह महा-लक्ष्मीं सरोज-स्थिताम्॥ २॥
घण्टा-शूल-हलानि शङ्ख-मुसले चक्रं धनुः सायकम्,
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्य-प्रभाम्।
गौरी-देह-समुद्भवां त्रिजगतामाधार-भूतां महा—
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम्॥ ३॥

मानस-पूजा—श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-भिः लं पृथ्वी-तत्त्वात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः, हं आकाश-तत्त्वात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः, यं वायु-तत्त्वात्मकं धूपं घ्रापयामि नमः, रं अग्नि-तत्त्वात्मकं दीपं दर्शयामि नमः, वं अमृत-तत्त्वात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि नमः, शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि नमः।

माला-पूजन—गन्ध-पुष्पादि से जप-माला का पूजन निम्न मन्त्र से करे—

ऐं ह्रीं अक्ष-मालायै नमः ।

फिर माला को हाथ जोड़कर निम्न मन्त्रों से नमस्कार करे—

ॐ मां माले महा-माये सर्व-शक्ति-स्वरूपिणि !
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥
ॐ अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जप-काले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मां सिद्धये ॥

ॐ अक्ष-मालाधिपतये सुसिद्धिं देहि देहि सर्व-मन्त्रार्थ-साधिनि साधय साधय सर्व-सिद्धिं परिकल्पय परिकल्पय मे स्वाहा ।

इसके बाद—

'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे'

या

'ॐ ऐं ह्रीं स्वाहा ॐ'

मूलमन्त्र का १०८ बार या यथा-शक्ति जप करे । जप के अन्त में निम्न मन्त्र से जप का फल देवी के बाएँ हाथ में समर्पित करे—

ॐ गुह्यातिगुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्-कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि ! त्वत्-प्रसादान्महेश्वरि ॥

सप्तशती-न्यासादि

विनियोग—प्रथम-मध्यमोत्तम-चरिताणां ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः, श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यो देवताः,

गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् छन्दांसि, अग्नि-वायु-सूर्याः तत्त्वानि, ऋग्-यजुः-सामवेदा ध्यानानि, सकल-कामना-सिद्धये श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवता-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास---ब्रह्म-विष्णु-रुद्र-ऋषिभ्यो नमः शिरसि । श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-देवताभ्यो नमः हृदि, गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्-छन्देभ्यो नमः मुखे । अग्नि-वायु-सूर्य-तत्त्वेभ्यो नमः हृदि । ऋग्-यजु-सामवेद-ध्यानेभ्यो नमः हृदि । सकल-कामना-सिद्धये श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती-प्रीत्त्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

कर-न्यास---'खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा, शङ्खिनी चापिनी बाण-भुशुण्डी परिघायुधा' अंगुष्ठाभ्यां नमः । 'शूलेन पाहि नो देवि ! पाहि खड्गेन चाम्बिके, घण्टा-स्वनेन नः पाहि चाप-ज्या-निःस्वनेन च' तर्जनीभ्यां नमः । 'प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके ! रक्ष दक्षिणे, भ्रामणेनात्म-शूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि' मध्यमाभ्यां नमः । 'सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते, यानि चात्त्यर्थ-घोराणि तै रक्षा-स्मांस्तथा भुवं' अनामिकाभ्यां नमः । खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ! कर-पल्लव-सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः' कनिष्ठाभ्यां नमः । 'सर्व-स्वरूपे सर्वेशे सर्व-शक्ति-समन्विते ! भयेभ्यस्त्राहि नो देवि ! दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते' करतल-करपृष्ठा-भ्यां नमः ।

षडङ्ग-न्यास--'खड्गिनी···परिघायुधा' हृदयाय नमः । 'शूलेन···निःस्वनेन च' शिरसे स्वाहा । 'प्राच्यां···तथेश्वरि' शिखायै वषट् । 'सौम्यानि···भुवं' कवचाय हुं । 'खड्ग···सर्वतः' नेत्र-त्रयाय वौषट् । 'सर्व-स्वरूपे···नमोऽस्तु ते' अस्त्राय फट् ।

इसके बाद नवार्ण-जप-विधि के अनुसार देवता-त्रय का ध्यान और मानस-पूजन कर सप्तशती का विधिवत् पाठ करे ।

प्रथम चरित न्यासादि

विनियोग–प्रथम-चरितस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः श्रीमहा-काली देवता, नन्दा शक्तिः, रक्त-दन्तिका बीजं, अग्निः तत्वं, ऋग्वेदः स्वरूपं, श्रीमहा-काली-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास–ब्रह्मा-ऋषये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहा-काली-देवतायै नमः हृदि, नन्दा-शक्त्यै नमः नाभौ, रक्त-दन्तिका-बीजाय नमः लिङ्गे, अग्नि-तत्वाय नमः गुह्ये, ऋग्वेद-स्वरूपाय नमः पादौ, श्रीमहा-काली-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

इसके बाद 'सप्तशती-न्यासादि' पृष्ठ ४६ पर उल्लिखित कर एवं षडङ्ग-न्यास कर ध्यान करे—

खड्गं चक्र-गदेषु-चाप-परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः।
शङ्खं सन्दधतीं करैस्त्रि-नयनां सर्वाङ्ग-भूषावृताम् ॥
नीलाश्म-द्युतिमास्य-पाद-दशकां सेवे महा-कालिकाम्।
यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥

इसके बाद 'नवार्ण जप-विधि' पृष्ठ ४४ पर उल्लिखित विधि से भगवती महा-काली का मानस पूजन कर देवी-वाहन सिंह का ध्यान करे। यथा–

देवी-वाहन सिंह-ध्यानम्

ग्रीवायां मधु-सूदनोऽस्य शिरसि श्रीनील-कण्ठः स्थितः,
श्रीदेवी गिरिजा ललाट-फलके वक्षः-स्थले शारदा।
षड्-वक्त्रो मणि-बन्ध-सन्धिषु तथा नागास्तु पार्श्व-स्थिताः
कर्णौ यस्य तु चाश्विनौ स भगवान् सिंहो ममास्त्विष्टदः॥
यन्नेत्रे शशि-भास्करौ वसु-कुलं दन्तेषु यस्य स्थितम्,
जिह्वायां वरुणस्तु हुं-कृतिरियं श्रीचर्चिका चण्डिका।
गण्डौ यक्ष-यमौ तथौष्ठ-युगलं सन्ध्या-द्वयं पृष्ठके,
वज्री यस्य विराजते स भगवान् सिंहो ममास्त्विष्टदः॥
ग्रीवा-सन्धिषु सप्त-विंशति-मितानृक्षाणि साध्या हृदि,
प्रौढ़ा निर्घृणता तमोऽस्य तु महा-क्रौर्यैः समाः पूतनाः।
प्राणे यस्य तु मातरः पितृ-कुलं यस्यास्त्यपानात्मकम्,
रूपे श्रीकमला कचेषु विमला ते स्यु रवे रश्मयः॥

इस प्रकार ध्यान कर सिंह का मानस पंचोपचारों से पूजन कर प्रथम चरित का पाठ प्रारम्भ करे।

❀ ॐ नमश्चण्डिकायै ❀

प्रथम-चरितम्

पूर्व-पीठिका

तपस्यन्तं महात्मानं मार्कण्डेयं महा-मुनिम् ।
व्यास-शिष्यो महा-तेजा जैमिनिः पर्यपृच्छत ॥

जैमिनि उवाच ।

मार्कण्डेय महा-प्राज्ञ सर्व-शास्त्र-विशारद !
श्रोतुमिच्छाम्यशेषेण देवी-माहात्म्यमुत्तमम् ॥

प्रथम अध्यायः

मधु-कैटभ-वधः

ॐ मार्कण्डेय उवाच ॥ १ ॥

सावर्णिः सूर्य-तनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः ।
निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम ॥ २

महामायानुभावेन यथा मन्वन्तराधिपः ।
स बभूव महाभागः सावर्णिस्तनयो रवेः ॥ ३

स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्र-वंश-समुद्भवः ।
सुरथो नाम राजाऽभूत् समस्ते क्षिति-मण्डले ॥ ४

तस्य पालयतः सम्यक् प्रजाः पुत्रानिवौरसान् ।
बभूवुः शत्रवो भूपाः कोला-विध्वंसिनस्तदा ॥ ५

तस्य तैरभवद् युद्धमति-प्रबल-दण्डिनः ।
न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोला-विध्वंसिभिर्जितः ॥ ६

ततः स्वपुरमायातो निज-देशाधिपोऽभवत् ।
आक्रान्तः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥ ७

अमात्यैर्बलिभिर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः ।
कोषो बलं चापहृतं तत्रापि स्व-पुरे ततः ॥ ८

ततो मृगया-व्याजेन हृत-स्वाम्यः स भू-पतिः ।
एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥ ९

स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विज-वर्यस्य मेधसः ।
प्रशान्त-श्वापदाकीर्णं मुनि-शिष्योप-शोभितम् ॥ १०

तस्थौ कञ्चित् स कालं च मुनिना तेन सत्कृतः ।
इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन् मुनि-वराश्रमे ॥ ११

सोऽचिन्तयत् तदा तत्र ममत्वाकृष्ट-चेतनः ॥ १२

मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ।
मद्-भृत्यैस्तैरसद्-वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा ॥ १३

न जाने स प्रधानो मे शूर-हस्ती सदा-मदः ।
मम वैरि-वशं यातः कान् भोगानुप-लप्स्यते ॥ १४

ये ममानुगता नित्यं प्रसाद-धन-भोजनैः ।
अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्य-महीभृताम् ॥ १५

असम्यग्-व्यय-शीलैस्तैः कुर्वद्भिः सततं व्ययम् ।
सञ्चितः सोऽति-दुःखेन क्षयं कोषो गमिष्यति ॥ १६

एतच्चान्यच्च सततं चिन्तयामास पार्थिवः ।
तत्र विप्राश्रमाभ्यासे वैश्यमेकं ददर्श सः ॥ १७
स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ।
स-शोक इव कस्मात् त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे ॥ १८
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भू-पतेः प्रणयोदितम् ।
प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् ॥ १९

वैश्य उवाच ॥२०॥

समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ।
पुत्र-दारैर्निरस्तश्च धन-लोभादसाधुभिः ॥ २१
विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ।
वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्त-बन्धुभिः ॥ २२
सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशलाकुशलात्मिकाम् ।
प्रवृत्तिं स्व-जनानां च दाराणां चात्र संस्थितः ॥ २३
किं नु तेषां गृहे क्षेममक्षेमं किं नु साम्प्रतम् ॥ २४
कथं ते किं नु सद्-वृत्ताः दुर्वृत्ताः किं नु मे सुताः ॥ २५

राजोवाच ॥२६॥

यैर्निरस्तो भवाँल्लुब्धैः पुत्र-दारादिभिर्धनैः ॥ २७
तेषु किं भवतः स्नेहमनुबध्नाति मानसम् ॥ २८

वैश्य उवाच ॥२९॥

एवमेतद् यथा प्राह भवानस्मद् गतं वचः ।
किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः ॥ ३०
यैः सन्त्यज्य पितृ-स्नेहं धन-लुब्धैर्निराकृतः ।
पति-स्वजन-हार्दं च हार्दि तेष्वेव मे मनः ॥ ३१
किमेतन्नाभि-जानामि जानन्नपि महा-मते !
यत् प्रेम-प्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु ॥ ३२
तेषां कृते मे निःश्वासा दौर्मनस्यं च जायते ॥ ३३
करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ॥ ३४

मार्कण्डेय उवाच ॥३५॥

ततस्तौ सहितौ विप्र ! तं मुनिं समुपस्थितौ ॥ ३६
समाधिर्नाम वैश्योऽसौ स च पार्थिव-सत्तमः ।
कृत्वा तु तौ यथा-न्यायं यथार्हं तेन संविदम् ॥ ३७
उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुर्वैश्य-पार्थिवौ ॥ ३८

राजोवाच ॥३९॥

भगवंस्त्वामहं प्रष्टुमिच्छाम्येकं वदस्व तत् ।
दुःखाय यन्मे मनसः स्व-चित्तायत्ततां विना ॥ ४०
ममत्वं मम राज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिलेष्वपि ।
जानतोऽपि यथाऽज्ञस्य किमेतन्मुनि-सत्तम ॥ ४१
अयं च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ।
स्व-जनेन च सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति ॥ ४२

एवमेष तथाऽहं च द्वावप्यत्यन्त-दुःखितौ ।
दृष्ट-दोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्ट-मानसौ ॥ ४३
तत् केनैतन्महाभाग ! यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥ ४४
ममास्य च भवत्येषाऽविवेकान्धस्य मूढता ॥ ४५

ऋषिरुवाच ॥४६॥

ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषय-गोचरे ।
विषयश्च महाभाग ! याति चैवं पृथक् पृथक् ॥ ४७
दिवान्धाः प्राणिनः केचिद् रात्रावन्धास्तथापरे ।
केचिद् दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्य-दृष्टयः ॥ ४८
ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किन्तु ते नहि केवलम् ।
यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशु-पक्षि-मृगादयः ॥ ४९
ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत् तेषां मृग-पक्षिणाम् ।
मनुष्याणां च यत् तेषां तुल्यमन्यत् तथोभयोः ॥ ५०
ज्ञानेऽपि सति पश्यैतान् पतङ्गाञ्छाव-चञ्चुषु ।
कण-मोक्षाद् ऋतान्मोहात् पीड्यमानानपि क्षुधा ॥ ५१
मानुषा मनुज-व्याघ्र! साभिलाषाः सुतान् प्रति ।
लोभात् प्रत्युपकाराय नन्वेते किं न पश्यसि ॥ ५२
तथापि ममतावर्ते मोह-गर्ते निपातिताः ।
महामाया-प्रभावेण संसार-स्थिति-कारिणः ॥ ५३
तन्नात्र विस्मयः कार्यो योग-निद्रा जगत्पतेः ।
महा-माया हरेश्चैतत् तया सम्मोह्यते जगत् ॥ ५४

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा ।
बलादाकृष्य मोहाय महा-माया प्रयच्छति ॥ ५५

तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् ।
सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां भवति मुक्तये ॥ ५६

सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतु-भूता सनातनी ॥ ५७
संसार-बन्ध-हेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥ ५८

राजोवाच ॥५९॥

भगवन्! का हि सा देवी महा-मायेति यां भवान् ।
ब्रवीति कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज ॥ ६०

यत्-स्वभावा च सा देवी यत्-स्वरूपा यदुद्भवा ॥ ६१
तत् सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो ब्रह्म-विदां वर ॥ ६२

ऋषिरुवाच ॥६३॥

नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ॥ ६४
तथापि तत्-समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम ॥ ६५

देवानां कार्य-सिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा ।
उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याऽप्यभिधीयते ॥ ६६

योग-निद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवी-कृते ।
आस्तीर्य शेषमभजत् कल्पान्ते भगवान् प्रभुः ॥ ६७

तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधु-कैटभौ ।
विष्णु-कर्ण-मलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ ॥ ६८

स नाभि-कमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः ।
दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् ॥ ६९

तुष्टाव योग-निद्रां तामेकाग्र-हृदय-स्थितः ।
विबोधनार्थाय हरेर्हरि-नेत्र-कृतालयाम् ॥ ७०

ब्रह्मोवाच ॥७१॥

विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थिति-संहार-कारिणीम् ।
स्तौमि निद्रां भगवतीं विष्णोरतुल-तेजसः ॥ ७२
त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कार-स्वरात्मिका॥ ७३
सुधा त्वमक्षरे नित्ये! त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ ७४
अर्ध-मात्रा-स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ।
त्वमेव सन्ध्या गायत्री त्वं देवि ! जननी परा ॥ ७५
त्वयैतद् धार्यते विश्वं त्वयैतत् सृज्यते जगत् ।
त्वयैतत् पाल्यते देवि ! त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥ ७६
विसृष्टौ सृष्टि-रूपा त्वं स्थिति-रूपा च पालने ।
तथा संहृति-रूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ७७
महा-विद्या महा-माया महा-मेधा महा-स्मृतिः ।
महा-मोहा च भवती महा-देवी महाऽसुरी ॥ ७८
प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुण-त्रय-विभाविनी ।
काल-रात्रिर्महा-रात्रिर्मोह-रात्रिश्च दारुणा ॥ ७९
त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोध-लक्षणा ।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च॥ ८०
खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शङ्खिनी चापिनी वाण-भुशुण्डी-परिघायुधा ॥ ८१

सौम्या सौम्य-तराऽशेष-सौम्येभ्यस्त्वति-सुन्दरी ।
पराऽपराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥ ८२

यच्च किञ्चित् क्वचिद् वस्तु सदसद् वाऽखिलात्मिके !
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥ ८३

यया त्वया जगत्-स्रष्टा जगत्-पाताऽत्ति यो जगत् ।
सोऽपि निद्रा-वशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ ८४

विष्णुः शरीर-ग्रहणमहमीशान एव च ।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत्॥ ८५

सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि ! संस्तुता ।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधु-कैटभौ ॥ ८६

प्रबोधं च जगत्-स्वामी नीयतामच्युतो लघु ।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ ८७

ऋषिरुवाच ॥८८॥

एवं स्तुता तदा देवी तामसी तत्र वेधसा ।
विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं मधु-कैटभौ ॥ ८९

नेत्रास्य-नासिका-बाहु-हृदयेभ्यस्तथोरसः ।
निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्त-जन्मनः ॥ ९०

उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः ।
एकार्णवेऽहि-शयनात् ततः स ददृशे च तौ ॥ ९१

मधु-कैटभौ दुरात्मानावति-वीर्य-पराक्रमौ ।
क्रोध-रक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ ॥ ९२

समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः ।
पञ्च-वर्ष-सहस्राणि बाहु-प्रहरणो विभुः ॥ ९३

तावप्यति-बलोन्मत्तौ महा-माया-विमोहितौ ॥ ९४

उक्त-वन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केशवम् ॥ ९५

भगवानुवाच ॥९६॥

भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि ॥ ९७

किमन्येन वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम ॥ ९८

ऋषिरुवाच ॥९९॥

वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापो-मयं जगत् ।
विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान् कमलेक्षणः ॥ १००

आवां जहि न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ॥ १०१

ऋषिरुवाच ॥१०२॥

तथेत्युक्त्वा भगवता शङ्ख-चक्र-गदा-भृता ।
कृत्वा चक्रेण वै छिन्ने जघने शिरसी तयोः ॥ १०३

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् ।
प्रभावमस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ॐ ॥ १०४

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये मधु-कैटभ-वधो नाम प्रथमोऽध्यायः ॐ तत् सत् ॥

मध्यम चरित न्यासादि

विनियोग–मध्यम-चरितस्य विष्णु ऋषिः, उष्णिक् छन्दः, श्रीमहा-लक्ष्मीः देवता, शाकम्भरी शक्तिः, दुर्गा वीजं, वायुः तत्वं, यजुर्वेद-स्वरूपं, श्रीमहा-लक्ष्मी-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास–विष्णु-ऋषये नमः शिरसि, उष्णिक्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहा-लक्ष्मी-देवतायै नमः हृदि, शाकम्भरी-शक्त्यै नमः नाभौ, दुर्गा-वीजाय नमः लिङ्गे, वायु-तत्वाय नमः गुह्ये, यजुर्वेद-स्वरूपाय नमः पादयोः, श्रीमहा-लक्ष्मी-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

इसके वाद 'सप्तशती-न्यासादि' पृष्ठ ४६ पर उल्लिखित कर एवं षडङ्ग-न्यास कर ध्यान करे–

अक्ष-स्रक्-परशुं गदेषु-कुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकाम् ।
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म-जलजं घण्टां सुरा-भाजनम् ।।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननाम् ।
सेवे सैरिभ-मर्दिनीमिह महा-लक्ष्मीं सरोज-स्थिताम् ।।

इस प्रकार ध्यान कर 'नवार्ण-जप-विधि' पृष्ठ ४४ पर उल्लिखित विधि से भगवती महालक्ष्मी का मानस पूजन कर मध्यम चरित का पाठ प्रारम्भ करे ।

मध्यम-चरितम्

द्वितीय अध्यायः

महिषासुर-सैन्य-वधः

ॐ ऋषिरुवाच ॥१॥

देवासुरमभूद् युद्धं पूर्णमब्द-शतं पुरा ।
महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥ २
तत्रासुरैर्महा-वीर्यैर्देव-सैन्यं पराजितम् ।
जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥ ३

ततः पराजिता देवाः पद्म-योनिं प्रजा-पतिम् ।
पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेश-गरुड-ध्वजौ ॥ ४
यथा-वृत्तं तयोस्तद्-वन्महिषासुर-चेष्टितम् ।
त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभि-भव-विस्तरम् ॥ ५
सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च ।
अन्येषां चाधिकारान् स स्वयमेवाधि-तिष्ठति ॥ ६
स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देव-गणा भुवि ।
विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेण दुरात्मना ॥ ७
एतद् वः कथितं सर्वममरारि-विचेष्टितम् ।
शरणं च प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ॥ ८

इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधु-सूदनः ।
चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटी-कुटिलाननौ ॥ ९

ततोऽति-कोप-पूर्णस्य चक्रिणो वदनात् ततः ।
निश्चक्राम महत् तेजो ब्रह्मणः शङ्करस्य च ॥ १०

अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः ।
निर्गतं सु-महत् तेजस्तच्चैक्यं समगच्छत ॥ ११

अतीव-तेजसः कूटं ज्वलन्तमिव पर्वतम् ।
ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वाला-व्याप्त-दिगन्तरम् ॥ १२

अतुलं तत्र तत् तेजः सर्व-देव-शरीरजम् ।
एकस्थं तदभून्नारी व्याप्त-लोक-त्रयं त्विषा ॥ १३

यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् ।
याम्येन चाभवन् केशा बाहवो विष्णु-तेजसा ॥ १४

सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाभवत् ।
वारुणेन च जङ्घोरू नितम्बस्तेजसा भुवः ॥ १५

ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदंगुल्योऽर्क-तेजसा ।
वसूनां च करांगुल्यः कौबेरेण च नासिका ॥ १६

तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा ।
नयन-त्रितयं जज्ञे तथा पावक-तेजसा ॥ १७

भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च ।
अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥ १८

ततः समस्त-देवानां तेजो-राशि-समुद्भवाम् ।
तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥ १९

शूलं शूलाद् विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाक-धृक् ।
चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्व-चक्रतः ॥ २०

शङ्खं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः ।
मारुतो दत्त-वांश्चापं बाण-पूर्णे तथेषुधी ॥ २१

वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः ।
ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात् ॥ २२

काल-दण्डाद् यमो दण्डं पाशं चाम्बु-पतिर्ददौ ।
प्रजापतिश्चाक्ष-मालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥ २३

समस्त-रोम-कूपेषु निज-रश्मीन् दिवाकरः ।
कालश्च दत्त-वान् खड्गं तस्याश्चर्म च निर्मलम् ॥ २४

क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे ।
चूडा-मणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ॥ २५

अर्ध-चन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान् सर्व-बाहुषु ।
नूपुरौ विमलौ तद्-वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥ २६

अंगुलीयक-रत्नानि समस्तास्वंगुलीषु च ।
विश्व-कर्मा ददौ तस्यै परशुं चाति-निर्मलम् ॥ २७

अस्त्राण्यनेक-रूपाणि तथाऽभेद्यं च दंशनम् ।
अम्लान-पङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम् ॥ २८

अददज्जलधिस्तस्यै पङ्कजं चाति-शोभनम् ।
हिम-वान् वाहनं सिंहं रत्नानि विविधानि च ॥ २९

ददावशून्यं सुरया पान-पात्रं धनाधिपः ।
शेषश्च सर्व-नागेशो महा-मणि-विभूषितम् ॥ ३०

नाग-हारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम् ।
अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥ ३१

सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः ।
तस्या नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ॥ ३२

अमायतातिमहता प्रति-शब्दो महानभूत् ।
चुक्षुभुः सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ॥ ३३

चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च मही-धराः ।
जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंह-वाहिनीम् ॥ ३४

तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्ति-नम्रात्म-मूर्तयः ।
दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः ॥ ३५

सन्नद्धाखिल-सैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः ।
आः किमेतदिति क्रोधादाभाष्य महिषासुरः ॥ ३६

अभ्यधावत तं शब्दमशेषैरसुरैर्वृतः ।
स ददर्श ततो देवीं व्याप्त-लोक-त्रयां त्विषा ॥ ३७

पादाक्रान्त्या नत-भुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम् ।
क्षोभिताशेष-पातालां धनुर्ज्या-निःस्वनेन ताम् ॥ ३८

दिशो भुज-सहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम् ।
ततः प्रववृते युद्धं तया देव्या सुर-द्विषाम् ॥ ३९

शस्त्रास्त्रैर्बहुधा मुक्तैरादीपित-दिगन्तरम् ।
महिषासुर-सेनानीश्चिक्षुराख्यो महाऽसुरः ॥ ४०

युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्ग बलान्वितः ।
रथानामयुतैः षड्भिरुदग्राख्यो महाऽसुरः ॥ ४१

अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण महा-हनुः ।
पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महाऽसुरः ॥ ४२

अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे ।
गज-वाजि-सहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥ ४३

वृतो रथानां कोटचा च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत ।
विडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिरथायुतैः ॥ ४४

युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः ।
अन्ये च तत्रायुतशो रथ-नाग-हयैर्वृताः ॥ ४५

युयुधुः संयुगे देव्या सह तत्र महाऽसुराः ।
कोटि-कोटि-सहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥ ४६

हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः ।
तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ॥ ४७

युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः परशु-पट्टिशैः ।
केचिच्च चिक्षिपुः शक्तीः केचित् पाशांस्तथापरे ॥ ४८

देवीं खड्ग-प्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रचक्रमुः ।
साऽपि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका॥ ४९

लीलयैव प्रचिच्छेद निज-शस्त्रास्त्र-वर्षिणी ।
अनायस्ताननना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः॥ ५०

मुमोचासुर-देहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी ।
सोऽपि क्रुद्धो धुत-सटो देव्या वाहन-केशरी ॥ ५१

चचारासुर-सैन्येषु वनेष्विव हुताशनः ।
निःश्वासान् मुमुचे यांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका ॥ ५२

त एव सद्यः सम्भूता गणाः शत-सहस्रशः ।
युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दिपालासि-पट्टिशैः ॥ ५३

नाशयन्तोऽसुर-गणान् देवी-शक्त्युपबृंहिताः ।
अवादयन्त पटहान् गणाः शङ्खांस्तथापरे ॥ ५४

मृदङ्गाश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्ध-महोत्सवे ।
ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्ति-वृष्टिभिः ॥ ५५

खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महाऽसुरान् ।
पातयामास चैवान्यान् घण्टा-स्वन-विमोहितान् ॥ ५६

असुरान् भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् ।
केचिद् द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः खड्ग-पातैस्तथापरे ॥ ५७

विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते ।
वेमुश्च केचिद् रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ॥ ५८

केचिन्निपतिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि ।
निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद् रणाजिरे ॥ ५९

श्येनानुकारिणः प्राणान् मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः ।
केषांचिद् बाहवश्छिन्नाश्छिन्न-ग्रीवास्तथापरे ॥ ६०

शिरांसि पेतुरन्येषामन्ये मध्ये विदारिताः ।
विच्छिन्न-जङ्घास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महाऽसुराः ॥ ६१

एक-बाह्वक्षि-चरणाः केचिद् देव्या द्विधा कृताः ।
छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ॥ ६२

कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीत-परमायुधाः ।
ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्य-लयाश्रिताः ॥ ६३

कबन्धाश्छिन्न-शिरसः खड्ग-शक्त्यृष्टि-पाणयः ।
तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महाऽसुराः ॥ ६४
पातितै रथ-नागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा ।
अगम्या साऽभवत् तत्र यत्राऽभूत् स महा-रणः ॥ ६५
शोणितौघा महा-नद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्रुवुः ।
मध्ये चासुर-सैन्यस्य वारणासुर-वाजिनाम् ॥ ६६
क्षणेन तन्महा-सैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृण-दारु-महाचयम् ॥ ६७
स च सिंहो महा-नादमृत्सृजन् धुत-केशरः ।
शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥ ६८
देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः ।
यथैषां तुतुषुर्देवाः पुष्प-वृष्टि-मुचो दिवि ॐ ॥ ६९

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये
महिषासुर-सैन्य-वधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॐ तत् सत् ॥

तृतीय अध्यायः

महिषासुर-वधः

ॐ ऋषिरुवाच ॥१॥

निहन्य-मानं तत्-सैन्यमवलोक्य महाऽसुरः ।
सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद् ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् ॥ २

स देवीं शर-वर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः ।
यथा मेरु-गिरेः शृङ्गं तोय-वर्षेण तोयदः ॥ ३

तस्य च्छित्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् ।
जघान् तुरगान् वाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ॥ ४

चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चाति-समुच्छ्रितम् ।
विव्याध चैव गात्रेषु छिन्न-धन्वानमाशुगैः ॥ ५

स च्छिन्न-धन्वा विरथो हताश्वो हत-सारथिः ।
अभ्यधावत तां देवीं खड्ग-चर्म-धरोऽसुरः ॥ ६

सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्ण-धारेण मूर्धनि ।
आजघान भुजे सव्ये देवीमप्यति-वेग-वान् ॥ ७

तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृप-नन्दन !
ततो जग्राह शूलं स कोपादरुण-लोचनः ॥ ८

चिक्षेप च ततस्तत् भद्रकाल्यां महाऽसुरः ।
जाज्वल्य-मानं तेजोभी रवि-बिम्बमिवाम्बरात् ॥ ९

दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवी शूलममुञ्चत ।
तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महाऽसुरः ॥ १०

हते तस्मिन् महा-वीर्ये महिषस्य चमू-पतौ ।
आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ॥ ११
सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् ।
हुङ्काराभि-हतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥ १२
भग्नां शक्तिं निपतितां दृष्ट्वा क्रोध-समन्वितः ।
चिक्षेप चामरः शूलं बाणैस्तदपि साच्छिनत् ॥ १३
ततः सिंहः समुत्पत्य गज-कुम्भान्तरे स्थितः ।
बाहु-युद्धेन युयुधे तेनोच्चैस्त्रिदशारिणा ॥ १४
युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ ।
युयुधातेऽति-संरब्धौ प्रहारैरति-दारुणैः ॥ १५
ततो वेगात् खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा ।
कर-प्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक् कृतम् ॥ १६
उदग्रश्च रणे देव्या शिला-वृक्षादिभिर्हतः ।
दन्त-मुष्टि-तलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥ १७
देवी क्रुद्धा गदा-पातैश्चूर्णयामास चोद्धतम् ।
वाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथाऽन्धकम् ॥ १८
उग्रास्यमुग्र-वीर्यं च तथैव च महा-हनुम् ।
त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥ १९
विडालस्यासिना कायात् पातयामास वै शिरः ।
दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यम-क्षयम् ॥ २०
एवं संक्षीयमाणे तु स्व-सैन्ये महिषासुरः ।
माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान् ॥ २१
कांश्चित् तुण्ड-प्रहारेण खुर-क्षेपैस्तथाऽपरान् ।

लांगूल-ताडितांश्चान्याञ्छृङ्गाभ्यां च विदारितान्॥२२
वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च ।
निःश्वास-पवनेनान्यान् पातयामास भू-तले ॥ २३
निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः ।
सिंहं हन्तुं महा-देव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ॥ २४
सोऽपि कोपान्महा-वीर्यः खुर-क्षुण्ण-महीतलः ।
शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चांश्चिक्षेप च ननाद च ॥ २५
वेग-भ्रमण-विक्षुण्णा मही तस्य व्यशीर्यत ।
लांगूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥ २६
धुत शृङ्ग-विभिन्नाश्च खण्डं खण्डं ययुर्घनाः ।
श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ॥ २७
इति क्रोध-समाध्मातमापतन्तं महाऽसुरम् ।
दृष्ट्वा सा चण्डिका कोपं तद्-बधाय तदाकरोत् ॥ २८
सा क्षिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महाऽसुरम् ।
तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महा-मृधे ॥ २९
ततः सिंहोऽभवत् सद्यो यावत् तस्याम्बिका शिरः।
छिनत्ति तावत् पुरुषः खड्ग-पाणिरदृश्यत ॥ ३०
तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः ।
तं खड्ग-चर्मणा सार्धं ततः सोऽभून्महा-गजः ॥ ३१
करेण च महा-सिंहं तं चकर्ष जगर्ज च ।
कर्षतस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥ ३२
ततो महाऽसुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः ।
तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं स-चराचरम् ॥ ३३

ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् ।
पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुण-लोचना ।। ३४

ननर्द चासुरः सोऽपि बल-वीर्य-मदोद्धतः ।
विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ।। ३५

सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः ।
उवाच तं मदोद्धूत-मुख-रागाकुलाक्षरम् ।। ३६

देव्युवाच ।।३७।।

गर्ज गर्ज क्षणं मूढ ! मधु यावत् पिबाम्यहम् ।
मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ।। ३८

ऋषिरुवाच ।।३९।।

एवमुक्त्वा समुत्पत्य साऽऽरूढा तं महाऽसुरम् ।
पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडत ।। ४०

ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निज-मुखात् ततः ।
अर्ध-निष्क्रान्त एवासीद् देव्या वीर्येण सम्वृतः ।। ४१

अर्ध-निष्क्रान्त एवासौ युध्यमानो महाऽसुरः ।
तया महासिना देव्या शिरश्छित्वा निपातितः ।। ४२

ततो हाहा-कृतं सर्वं दैत्य-सैन्यं ननाश तत् ।
प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवता-गणाः ।। ४३

तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः ।
जगुर्गन्धर्व-पतयो ननृतुश्चाप्सरो गणाः ॐ ।। ४४

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये
महिषासुर-वधो नाम तृतीयोऽध्यायः ॐ तत् सत् ।।

चतुर्थ अध्याय:

शक्रादि-स्तुति:

ॐ ऋषिरुवाच ॥१॥

शक्रादय: सुर-गणा निहतेऽति-वीर्ये,
तस्मिन् दुरात्मनि सुरारि-बले च देव्या ।
तां तुष्टुवु: प्रणति-नम्र-शिरोधरांसा,
वाग्भि: प्रहर्ष-पुलकोद्गम-चारु-देहा: ॥ २

देव्या यया ततमिदं जगदात्म-शक्त्या,
निश्शेष-देव-गण-शक्ति-समूह-मूर्त्या ।
तामम्बिकामखिल-देव-महर्षि-पूज्यां,
भक्त्या नता: स्म विदधातु शुभानि सा न: ॥ ३

यस्या: प्रभावमतुलं भगवाननन्तो,
ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च ।
सा चण्डिकाखिल-जगत्-परिपालनाय,
नाशाय चाशुभ-भयस्य मतिं करोतु ॥ ४

या श्री: स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मी:,
पापात्मनां कृत-धियां हृदयेषु बुद्धि: ।
श्रद्धा सतां कुल-जन-प्रभवस्य लज्जा,
तां त्वां नता: स्म परिपालय देवि ! विश्वम् ॥ ५

किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्,
किं चाति-वीर्यमसुर-क्षय-कारि भूरि ।

किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि,
सर्वेषु देव्यसुर-देव-गणादिकेषु ॥ ६

हेतुः समस्त-जगतां त्रिगुणाऽपि दोषै-
र्न ज्ञायसे हरि-हरादिभिरप्यपारा ।
सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंश-भूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७

यस्याः समस्त-सुरता समुदीरणेन,
तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि !
स्वाहाऽसि वै पितृ-गणस्य च तृप्ति-हेतु-
रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥ ८

या मुक्ति-हेतुरविचिन्त्य-महा-व्रता त्व-
मभ्यस्यसे सु-नियतेन्द्रिय-तत्व-सारैः ।
मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्त-समस्त-दोषै-
र्विद्याऽसि सा भगवती परमा हि देवि ॥ ९

शब्दात्मिका सु-विमलर्ग्यजुषां निधान-
मुद्गीथ-रम्य-पद-पाठ-वतां च साम्नाम् ।
देवी त्रयी भगवती भव-भावनाय,
वार्ता च सर्व-जगतां परमार्ति-हन्त्री ॥ १०

मेधाऽसि देवि! विदिताऽखिल-शास्त्र-सारा,
दुर्गाऽसि दुर्ग-भव-सागर-नौर-सङ्गा ।
श्रीः कैटभारि-हृदयैक-कृताधिवासा,
गौरी त्वमेव शशि-मौलि-कृत-प्रतिष्ठा ॥ ११

ईषत्-सहासममलं परि-पूर्ण-चन्द्र-
बिम्बानु-कारि कनकोत्तम-कान्ति-कान्तम् ।
अत्यद्भुतं प्रहृतमात्त-रुषा तथापि,
वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ १२

दृष्ट्वा तु देवि ! कुपितं भ्रुकुटी-कराल-
मुद्यच्छशाङ्क-सदृशच्छवि यन्न सद्यः ।
प्राणान् मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं,
कैर्जीव्यते हि कुपितान्तक-दर्शनेन ॥ १३

देवि ! प्रसीद परमा भवती भवाय,
सद्यो विनाशयसि कोप-वती कुलानि ।
विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
न्नीतं बलं सु-विपुलं महिषासुरस्य ॥ १४

ते सम्मता जन-पदेषु धनानि तेषां,
तेषां यशांसि न च सीदति धर्म-वर्गः ।
धन्यास्त एव निभृतात्मज-भृत्य-दारा,
येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५

धर्म्याणि देवि ! सकलानि सदैव कर्मा-
ण्यत्यादृतः प्रति-दिनं सुकृती करोति ।
स्वर्गं प्रयाति च ततो भवती-प्रसादा-
ल्लोक-त्रयेऽपि फलदा ननु देवि ! तेन ॥ १६

दुर्गे ! स्मृता हरसि भीतिमशेष-जन्तोः,
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव-शुभां ददासि ।

दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि ! का त्वदन्या,
सर्वोपकार-करणाय सदाऽऽर्द्र-चित्ता ॥ १७

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते,
कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।
संग्राम-मृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु,
मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि ॥ १८

दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म,
सर्वासुरानरिषु यत् प्रहिणोषि शस्त्रम् ।
लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्र-पूता,
इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽति-साध्वी ॥ १९

खड्ग-प्रभा-निकर-विस्फुरणैस्तथोग्रैः,
शूलाग्र-कान्ति-निवहेन दृशोऽसुराणाम् ।
यन्नागता विलयमंशुमदिन्दु-खण्ड-
योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥ २०

दुर्वृत्त-वृत्त-शमनं तव देवि ! शीलं,
रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।
वीर्यं च हन्तृ हृत-देव-पराक्रमाणां,
वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥ २१

केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य,
रूपं च शत्रु-भय-कार्यति-हारि कुत्र ।

चित्ते कृपा समर-निष्ठुरता च दृष्टा,

त्वय्येव देवि वरदे ! भुवन-त्रयेऽपि ॥ २२

त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपु-नाशनेन,

त्रातं त्वया समर-मूर्धनि तेऽपि हत्वा ।

नीता दिवं रिपु-गणा भयमप्यपास्त-

मस्माकमुन्मद-सुरारि-भवं नमस्ते ॥ २३

शूलेन पाहि नो देवि ! पाहि खड्गेन चाम्बिके !

घण्टा-स्वनेन नः पाहि चाप-ज्या-निःस्वनेन च ॥ २४

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके ! रक्ष दक्षिणे ।

भ्रामणेनात्म-शूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ २५

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।

यानि चात्यर्थ-घोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् । २६

खड्ग-शूल-गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके !

कर-पल्लव-सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ २७

ऋषिरुवाच ॥२८॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।

अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥ २९

भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु धूपिता ।

प्राह प्रसाद-सुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥ ३०

देव्युवाच ॥३१॥

व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभि-वांछितम् ॥ ३१

देवा ऊचुः ॥३३॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ।
यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ॥ ३४

यदि चापि वरो देयस्त्वयाऽस्माकं महेश्वरि !
संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ॥ ३५

यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने !
तस्य वित्तर्द्धि-विभवैर्धन-दारादि-सम्पदाम् ॥ ३६

वृद्धयेऽस्मत् प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ ३७

ऋषिरुवाच ॥३८॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथात्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥ ३९

इत्येतत् कथितं भूप ! सम्भूता सा यथा पुरा ।
देवी देव-शरीरेभ्यो जगत्-त्रय-हितैषिणी ॥ ४०

पुनश्च गौरी-देहात् सा समुद्भूता यथाऽभवत् ।
वधाय दुष्ट-दैत्यानां तथा शुम्भ-निशुम्भयोः ॥ ४१

रक्षणाय च लोकानां देवानामुप-कारिणी ।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं यथा-वत् कथयामि ते ॐ ॥४२

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये
शक्रादि-स्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॐ तत् सत् ॥

उत्तम चरित न्यासादि

विनियोग—उत्तम-चरितस्य रुद्र ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहा-सरस्वती देवता, भीमा शक्तिः, भ्रामरी वीजं, सूर्यः तत्त्वं, साम-वेदः स्वरूपं, श्रीमहासरस्वती-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—रुद्र-ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहासरस्वती-देवतायै नमः हृदि, भीमा-शक्त्यै नमः नाभौ, भ्रामरी-वीजाय नमः लिङ्गे, सूर्य-तत्त्वाय नमः गुह्ये, साम-वेद-स्वरूपाय नमः पादौ, श्रीमहा-सरस्वती-प्रीत्यर्थं पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

इसके वाद 'सप्तशती-न्यासादि' पृष्ठ ४६ पर उल्लिखित कर एवं षडङ्ग-न्यास कर ध्यान करे---

घण्टा-शूल-हलानि शङ्ख-मुसले चक्रं धनुः सायकम् ।
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त-विलसच्छीतांशु-तुल्य-प्रभाम् ॥
गौरी-देह-समुद्भवां त्रि-नयनामाधार-भूतां महा—
पूर्वामत्र सरस्वतीमनु-भजे शुम्भादि-दैत्यार्दिनीम् ॥

इस प्रकार ध्यान कर 'नवार्ण-जप-विधि' पृष्ठ ४४ पर उल्लिखित विधि से भगवती महा-सरस्वती का मानस पूजन कर उत्तम चरित का पाठ प्रारम्भ करे ।

उत्तम-चरित्रम्

पञ्चम अध्यायः

शुम्भ-निशुम्भ-वधः

ॐ ऋषिरुवाच ॥१॥

पुरा शुम्भ-निशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शची-पतेः ।
त्रैलोक्यं यज्ञ-भागाश्च हृता मद-बलाश्रयात् ॥ २
तावेव सूर्यतां तद्-वदधिकारं तथैन्दवम् ।
कौबेरमथ याम्यं च चक्राते वरुणस्य च ॥ ३
तावेव पवनर्द्धि च चक्रतुर्वह्नि-कर्म च ।
ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्ट-राज्याः पराजिताः ॥ ४
हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः ।
महाऽसुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥ ५
तयाऽस्माकं वरो दत्तो यथाऽऽपत्सु स्मृताखिलाः ।
भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात् परमापदः ॥ ६
इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् ।
जग्मुस्तत्र ततो देवीं विष्णु-मायां प्रतुष्टुवुः ॥ ७

देवा ऊचुः ॥८॥

नमो देव्यै महा-देव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ ६

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दु-रूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥ १०

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥ ११

दुर्गायै दुर्ग-पारायै सारायै सर्व-कारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ १२

अति-सौम्याति-रौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।
नमो जगत्-प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥ १३

या देवी सर्व-भूतेषु विष्णु-मायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १४-१६

या देवी सर्व-भूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १७-१९

या देवी सर्व-भूतेषु बुद्धि-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २०-२२

या देवी सर्व-भूतेषु निद्रा-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २३-२५

या देवी सर्व-भूतेषु क्षुधा-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २६-२८

या देवी सर्व-भूतेषु छाया-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, तमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २९-३१

या देवी सर्व-भूतेषु शक्ति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ॥ ३२-३४

या देवी सर्व-भूतेषु तृष्णा-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ३५-३७

या देवी सर्व-भूतेषु क्षान्ति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ३८-४०

या देवी सर्व-भूतेषु जाति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ४१-४३

या देवी सर्व-भूतेषु लज्जा-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ४४-४६

या देवी सर्व-भूतेषु शान्ति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ४७-४९

या देवी सर्व-भूतेषु श्रद्धा-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ५०-५२

या देवी सर्व-भूतेषु कान्ति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ५३-५५

या देवी सर्व-भूतेषु लक्ष्मी-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ५६-५८

या देवी सर्व-भूतेषु वृत्ति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ५९-६१

या देवी सर्व-भूतेषु स्मृति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ६२-६४

या देवी सर्व-भूतेषु दया-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ६५-६७

या देवी सर्व-भूतेषु तुष्टि-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ६८-७०

या देवी सर्व-भूतेषु मातृ-रूपेण-संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ७१-७३

या देवी सर्व-भूतेषु भ्रान्ति-रूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ७४-७६

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्ति-देव्यै नमो नमः ।। ७७

चिति-रूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः ।। ७८-८०

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्ट-संश्रयात्
तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभ-हेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ।। ८१

या साम्प्रतं चोद्धत-दैत्य-तापितै—
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्ति-विनम्र-मूर्तिभिः ।। ८२

ऋषिरुवाच ।।८३।।

एवं स्तवादि-युक्तानां देवानां तत्र पार्वती ।
स्नातुमभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृप-नन्दन ।। ८४

साऽब्रवीत् तान् सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का ।
शरीर-कोशतश्चास्याः समुद्भूताऽब्रवीच्छिवा ॥ ८५

स्तोत्रं ममैतत् क्रियते शुम्भ-दैत्य-निराकृतैः ।
देवैः समेतैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥ ८६

शरीर-कोशाद् यत् तस्याः पार्वत्याः निःसृताम्बिका ।
कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥ ८७

तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाऽभूत् साऽपि पार्वती ।
कालिकेति समाख्याता हिमाचल-कृताश्रया ॥ ८८

ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सु-मनोहरम् ।
ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुभ-निशुम्भयोः ॥ ८९

ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सु-मनोहरा ।
काप्यास्ते स्त्री महाराज ! भासयन्ती हिमाचलं ॥ ९०

नैव तादृक् क्वचिद् रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् ।
ज्ञायतां काऽप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ॥ ९१

स्त्री-रत्नमति-चार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा ।
सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र ! भवान् द्रष्टुमर्हति ॥ ९२

यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो !
त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे ॥ ९३

ऐरावतः समानीतो गज-रत्नं पुरन्दरात् ।
पारिजात-तरुश्चायं तथैवोच्चैःश्रवा हयः ॥ ९४

विमानं हंस-संयुक्तमेतत् तिष्ठति तेऽङ्गणे ।
रत्न-भूतमिहानीतं यदासीद् वेधसोऽद्भुतम् ॥ ९५

निधिरेष महा-पद्मः समानीतो धनेश्वरात् ।
किञ्जल्किनीं ददौ चाब्धिर्मालामम्लान-पङ्कजाम्।। ९६
छत्रं ते वारुणं गेहे काञ्चन-स्रावि तिष्ठति ।
तथाऽयं स्यन्दन-वरो यः पुराऽऽसीत् प्रजा-पतेः ।। ९७
मृत्योरुत्क्रान्तिदा नाम शक्तिरीश ! त्वया हृता ।
पाशः सलिल-राजस्य भ्रातुस्तव परिग्रहे ।। ९८
निशुम्भस्याब्धि-जाताश्च समस्ता रत्न-जातयः ।
वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्नि-शौचे च वाससी ।। ९९
एवं दैत्येन्द्र ! रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते ।
स्त्री-रत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ।। १००

ऋषिरुवाच ।।१०१।।

निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्ड-मुण्डयोः ।
प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महाऽसुरम् ।। १०२
इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम ।
यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा कार्यं त्वया लघु ।। १०३
स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽति-शोभने ।
सा देवी तां ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ।। १०४

दूत उवाच ।।१०५।।

देवि ! दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः ।
दूतोऽहं प्रेषितस्तेन त्वत्-सकाशमिहागतः ।। १०६
अव्याहताज्ञः सर्वासु यः सदा देव-योनिषु ।
निर्जिताखिल-दैत्यारिः स यदाह श्रृणुष्व तत् ।। १०७

मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः ।
यज्ञ-भागानहं सर्वानुपाश्नामि पृथक् पृथक् ॥ १०८

त्रैलोक्ये वर-रत्नानि मम वश्यान्यशेषतः ।
तथैव गज-रत्नं च हृत्वा देवेन्द्र-वाहनम् ॥ १०९

क्षीरोद-मथनोद्भूतमश्व-रत्नं ममामरैः ।
उच्चैःश्रवस-संज्ञं तत्-प्रणिपत्य समर्पितम् ॥ ११०

यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च ।
रत्न-भूतानि भूतानि तानि मय्येव शोभने ॥ १११

स्त्री-रत्न-भूतां त्वां देवि ! लोके मन्यामहे वयम् ।
सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्न-भुजो वयम् ॥ ११२

मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरु-विक्रमम् ।
भज त्वं चञ्चलापाङ्गि! रत्न-भूताऽसि वै यतः ॥ ११३

परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्-परिग्रहात् ।
एतद्-बुद्ध्या समालोच्य मत्-परिग्रहतां व्रज ॥ ११४

ऋषिरुवाच ॥११५॥

इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तः-स्मिता जगौ ।
दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत् ॥ ११६

देव्युवाच ॥११७॥

सत्युमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किञ्चित् त्वयोदितं ।
त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः ॥ ११८

किं त्वत्र यत् प्रतिज्ञातं मिथ्या तत् क्रियते कथम् ।

श्रूयतामल्प-बुद्धित्वात् प्रतिज्ञा या कृता पुरा ।। ११९

यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति ।

यो मे प्रति-बलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ।। १२०

तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महाऽसुरः ।

मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ।।१२१

दूत उवाच ।। १२२ ।।

अवलिप्ताऽसि मैवं त्वं देवि ! ब्रूहि ममाग्रतः ।

त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भ-निशुम्भयोः ।। १२३

अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि ।

तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि! किं पुनः स्त्री त्वमेकिका ।। १२४

इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे ।

शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यसि सम्मुखम् ।। १२५

सा त्वं गच्छ ममैवोक्ता पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः ।

केशाकर्षण-निर्धूत-गौरवा मा गमिष्यसि ।। १२६

देव्युवाच ।। १२७ ।।

एवमेतद् बली शुम्भो निशुम्भश्चाति-वीर्य-वान् ।

किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ।। १२८

स त्वं गच्छ मयोक्तं ते यदेतत् सर्वमादृतः ।

तदाचक्ष्वासुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु तत् ॐ ।। १२९

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये देव्या दूत-सम्वादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॐ तत् सत् ।।

षष्ठ अध्याय:

धूम्र-लोचन-वधः

ॐ ऋषिरुवाच ।। १ ।।

इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्ष-पूरितः ।
समाचष्ट समागम्य दैत्य-राजाय विस्तरात् ।। २

तस्य दूतस्य तद्-वाक्यमाकर्ण्याऽसुर-राट् ततः ।
स-क्रोधः प्राह दैत्यानामधिपं धूम्र-लोचनम् ।। ३

हे धूम्र-लोचनाशु त्वं स्व-सैन्य-परिवारितः ।
तामानय बलाद् दुष्टां केशाकर्षण-विह्वलाम् ।। ४

तत्-परित्राणदः कश्चिद् यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः ।
स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ।। ५

ऋषिरुवाच ।। ६ ।।

तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्र-लोचनः ।
वृतः षष्टया सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ।। ७

स दृष्ट्वा तां ततो देवीं तुहिनाचल-संस्थिताम् ।
जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भ-निशुम्भयोः ।। ८

न चेत् प्रीत्याद्य भवती मद्-भर्तारमुपैष्यति ।
ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षण-विह्वलाम् ।। ९

देव्युवाच ।। १० ।।

दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बल-सम्वृतः ।
बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ।। ११

ऋषिरुवाच ॥ १२ ॥

इत्युक्तः सोऽभ्यधावत् तमसुरो धूम्र-लोचनः ।
हुंकारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥ १३

अथ क्रुद्धं महा-सैन्यमसुराणां तथाम्बिका ।
ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्ति-परश्वधैः ॥ १४

ततो धुत-सटः कोपात् कृत्वा नादं सु-भैरवम् ।
पपाताऽसुर-सेनायां सिंहो देव्याः स्व-वाहनः ॥ १५

कांश्चित् कर-प्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् ।
आक्रम्य चाधरेणान्यान् स जघान महाऽसुरान् ॥ १६

केषाञ्चित् पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी ।
तथा तल-प्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् ॥ १७

विच्छिन्न-बाहु-शिरसः कृतास्तेन तथापरे ।
पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुत-केसरः ॥ १८

क्षणेन तद्-बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना ।
तेन केसरिणा देव्या वाहनेनाति-कोपिना ॥ १९

श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्र-लोचनम् ।
बलं च क्षयितं कृत्स्नं देवी-केसरिणा ततः ॥ २०

चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः ।
आज्ञपयामास च तौ चण्ड-मुण्डौ महाऽसुरौ ॥ २१

हे चण्ड ! हे मुण्ड ! बलैर्बहुभिः परिवारितौ ।
तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥ २२

केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वा संशयो युधि ।
तदाऽशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥ २३
तस्यां हतायां दुष्टायां सिंहे च विनिपातिते ।
शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकां ॐ॥ २४

मार्कण्डेय-पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये
शुम्भ-निशुम्भ-सेनानी-धूम्र-लोचन-वधो
नाम षष्ठोऽध्यायः ॐ तत् सत् ॥

सप्तम अध्यायः

चण्ड-मुण्ड-वधः

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥

आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्ड-मुण्ड-पुरोगमाः ।
चतुरङ्ग-बलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥ २
ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् ।
सिंहस्योपरि शैलेन्द्र-शृङ्गे महति काञ्चने ॥ ३
ते दृष्ट्वा तां समादातुमुद्यमं चक्रुरुद्यताः ।
आकृष्ट-चापाऽसि-धरास्तथाऽन्ये तत्-समीपगाः ॥ ४
ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन् प्रति ।
कोपेन चाऽस्या वदनं मसी-वर्णमभूत् तदा ॥ ५

भ्रुकुटी-कुटिलात् तस्या ललाट-फलकाद् द्रुतम् ।
काली कराल-वदना विनिष्क्रान्ताऽसि-पाशिनी ॥ ६

विचित्र-खट्वाङ्ग-धरा नर-माला-विभूषणा ।
द्वीपि-चर्म-परीधाना शुष्क-मांसाति-भैरवा ॥ ७

अति-विस्तार-वदना जिह्वा-ललन-भीषणा ।
निमग्नाऽऽरक्त-नयना नादाऽऽपूरित-दिङ्-मुखा ॥ ८

सा वेगेनाभि-पतिता घातयन्ती महाऽसुरान् ।
सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत् तद्-बलम् ॥ ९

पार्ष्णि-ग्राहांकुश-ग्राहि-योध-घण्टा-समन्वितान् ।
समादायैक-हस्तेन मुखे चिक्षेप वारणान् ॥ १०

तथैव योधं तुरगै रथं सारथिना सह ।
निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यति-भैरवम् ॥ ११

एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथ चापरम् ।
पादेनाक्रम्य चैवाऽन्यमुरसान्यमपोथयत् ॥ १२

तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महाऽस्त्राणि तथाऽसुरैः ।
मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥ १३

बलिनां तद्-बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम् ।
ममर्दाऽभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाडयत् तथा ॥ १४

असिना निहताः केचित् केचित् खट्वाङ्ग-ताडिताः ।
जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभि-हतास्तथा ॥ १५

क्षणेन तद् बलं सर्वमसुराणां निपातितम् ।
दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमति-भीषणाम् ॥ १६

शर-वर्षैर्महा-भीमैर्भीमाक्षीं तां महाऽसुरः ।
छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ।। १७
तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् ।
बभुर्यथार्क-बिम्बानि सु-बहूनि घनोदरम् ।। १८
ततो जहासाति-रुषा भीमं भैरव-नादिनी ।
कालो कराल-वक्त्रान्तर्दुर्दर्श-दशनोज्ज्वला ।। १९
उत्थाय च महासिंहं देवी चण्डमधावत ।
गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ।। २०
अथ मुण्डोऽभ्यधावत् तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
तमप्यपातयद् भूमौ सा खड्गाभि-हतं रुषा ।। २१
हत-शेषं ततः सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् ।
मुण्डं च सु-महा-वीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ।। २२
शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च ।
प्राह प्रचण्डाट्टहास-मिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ।। २३
मया तवात्रोपहृतौ चण्ड-मुण्डौ महा-पशू ।
युद्ध-यज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि ।। २४

ऋषिरुवाच ।। २५ ।।

तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्ड-मुण्डौ महाऽसुरौ ।
उवाच कालीं कल्याणी ललितं चण्डिका वचः ।। २६
यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता ।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि! भविष्यसिॐ ।। २७
श्रीमार्कण्डेय-पुराणे देवी-माहात्म्ये सावर्णिक-मन्वन्तरे
चण्ड-मुण्ड-वधो नाम सप्तमोऽध्यायः ॐ तत् सत् ।।

अष्टम अध्यायः

रक्त-बीज-वधः

ॐ ऋषिरुवाच ।। १ ।।

चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनिपातिते ।
बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ।। २
ततः कोप-पराधीन-चेताः शुम्भः प्रताप-वान् ।
उद्योगं सर्व-सैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ।। ३
अद्य सर्व-बलैर्दैत्याः षडशीतिरुदायुधाः ।
कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्व-बलैर्वृताः ।। ४
कोटि-वीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै ।
शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ।। ५
कालका दौर्हृदा मौर्याः कालकेयास्तथाऽसुराः ।
युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया त्वरिता मम ।। ६
इत्याज्ञाप्यासुर-पतिः शुम्भो भैरव-शासनः ।
निर्जगाम महा-सैन्य-सहस्रैर्बहुभिर्वृतः ।। ७
आयान्तं चण्डिका दृष्ट्वा तत्-सैन्यमति-भीषणम् ।
ज्या-स्वनैः पूरयामास धरणी-गगनान्तरम् ।। ८
ततः सिंहो महा-नादमतीव कृत-वान् नृप !
घण्टा-स्वनेन तन्नादमम्बिका चोप-वृंहयत् ।। ९
धनुर्ज्या-सिंह-घण्टानां नादापूरित-दिङ्-मुखा ।
निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारितानना ।। १०

तं निनादमुपश्रुत्य दैत्य-सैन्यैश्चतुर्दिशम् ।
देवी सिंहस्तथा काली स-रोषैः परिवारिताः ॥ ११
एतस्मिन्नन्तरे भूप ! विनाशाय सुर-द्विषाम् ।
भवायामर-सिंहानामति-वीर्य-बलान्विताः ॥ १२
ब्रह्मेश-गुह-विष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः ।
शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्-रूपैश्चण्डिकां ययुः ॥ १३
यस्य देवस्य यद् रूपं यथा भूषण-वाहनम् ।
तद्-वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ ॥ १४
हंस-युक्त-विमानाग्रे साक्ष-सूत्र-कमण्डलुः ।
आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साऽभिधीयते ॥ १५
माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूल-वर-धारिणी ।
महाऽहि-वलया प्राप्ता चन्द्र-रेखा-विभूषणा ॥ १६
कौमारी शक्ति-हस्ता च मयूर-वर-वाहना ।
योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुह-रूपिणी ॥ १७
तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरि संस्थिता ।
शङ्ख-चक्र-गदा-शार्ङ्ग-खड्ग-हस्ताभ्युपाययौ ॥ १८
यज्ञ-वाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः ।
शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रती तनुम् ॥ १९
नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः ।
प्राप्ता तत्र सटाक्षेप-नक्षत्र-संहतिः ॥ २०
वज्र-हस्ता तथैवेन्द्री गज-राजोपरि स्थिता ।
प्राप्ता सहस्र-नयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥ २१

ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देव-शक्तिभिः ।
हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याऽह चण्डिकाम् ।। २२
ततो देवी-शरीरात् तु विनिष्क्रान्ताऽति-भीषणा ।
चण्डिका-शक्तिरत्युग्रा शिवा-शत-निनादिनी ।। २३
सा चाह धूम्र-जटिलमीशानमपराजिता ।
दूत त्वं गच्छ भगवन् ! पार्श्वं शुम्भ-निशुम्भयोः ।। २४
ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावति-गर्वितौ ।
ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ।। २५
त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तु हविर्भुजः ।
यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ।। २६
बलावलेपादथ चेद् भवन्तो युद्ध-कांक्षिणः ।
तदागच्छत तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ।। २७
यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवः स्वयम् ।
शिव-दूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता ।। २८
तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वाख्यातं महाऽसुराः ।
अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र कात्यायनी स्थिता ।। २९
ततः प्रथममेवाग्रे शर-शक्त्यृष्टि-वृष्टिभिः ।
ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ।। ३०
सा च तान् प्रहितान् बाणाञ्छूल-शक्ति-परश्वधान् ।
चिच्छेद लीलयाध्मात-धनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ।। ३१
तस्याग्रतस्तथा काली शूल-पात-विदारितान् ।
खट्वाङ्ग-पोथितांश्चारीन् कुर्वती व्यचरत् तदा ।। ३२

कमण्डलु-जलाक्षेप-हत-वीर्यान् हतौजसः ।
ब्रह्माणी चाकरोच्छत्रून् येन येन स्म धावति ॥ ३३
माहेश्वरी-त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी ।
दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्याति-कोपना ॥ ३४
ऐन्द्री कुलिश-पातेन शतशो दैत्य-दानवाः ।
पेतुर्विदारिताः पृथ्व्यां रुधिरौघ-प्रवर्षिणः ॥ ३५
तुण्ड-प्रहार-विध्वस्ता दंष्ट्राग्र-क्षत-वक्षसः ।
वाराह-मूर्त्या न्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः ॥ ३६
नखैर्विदारितांश्चान्यान् भक्षयन्ती महाऽसुरान् ।
नारसिंही चचाराजौ नादापूर्ण-दिगम्बरा ॥ ३७
चण्डाट्ट-हासैरसुराः शिव-दूत्यभि-दूषिताः ।
पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्चखादाथ सा तदा ॥ ३८
इति मातृ-गणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महाऽसुरान् ।
दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारि-सैनिकाः ॥ ३९
पलायन-परान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृ-गणार्दितान् ।
योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्त-बीजो महाऽसुरः ॥ ४०
रक्त-बिन्दुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः ।
समुत्पतति मेदिन्यां तत्-प्रमाणस्तदाऽसुरः ॥ ४१
युयुधे स गदा-पाणिरिन्द्र-शक्त्या महाऽसुरः ।
ततश्चैन्द्री स्व-वज्रेण रक्त-बीजमताडयत् ॥ ४२
कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् ।
समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्-रूपास्तत्-पराक्रमाः ॥ ४३

यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद् रक्त-बिन्दवः ।
तावन्तः पुरुषा जातास्तद्-वीर्य-विक्रमाः ॥ ४४

ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्त-सम्भवाः ।
समं मातृभिरत्युग्र-शस्त्र-पातातिभीषणम् ॥ ४५

पुनश्च वज्र-पातेन क्षतमस्य शिरो यदा ।
ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः ॥ ४६

वैष्णवी-समरे चैनं चक्रेणाभि-जघान ह ।
गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥ ४७

वैष्णवी-चक्र-भिन्नस्य रुधिर-स्राव-सम्भवैः ।
सहस्रशो जगद्-व्याप्तं तत् - प्रमाणैर्महाऽसुरैः ॥ ४८

शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथाऽसिना ।
माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्त-बीजं महाऽसुरम् ॥ ४९

स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत् पृथक् ।
मातृः कोप-समाविष्टो रक्त-बीजो महाऽसुरः ॥ ५०

तस्याहतस्य बहुधा शक्ति-शूलादिभिर्भुवि ।
पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥ ५१

तैश्चासुरासृक्-सम्भूतैरसुरैः सकलं जगत् ।
व्याप्तमासीत् ततो देवा भयमाजग्मुरुत्तमम् ॥ ५२

तान् विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा ।
उवाच कालीं चामुण्डे ! विस्तीर्णं वदनं कुरु ॥ ५३

मच्छस्त्र-पात-सम्भूतान् रक्त-बिन्दून् महाऽसुरान् ।
रक्त-बिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना ॥ ५४

भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान् महाऽसुरान् ।
एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीण-रक्तो गमिष्यति ॥ ५५
भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे ।
इत्युक्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभि-जघान तम् ॥ ५६
मुखेन काली जगृहे रक्त-बीजस्य शोणितम् ।
ततोऽसावाजघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् ॥ ५७
न चास्य वेदनां चक्रे गदा-पातोऽल्पिकामपि ।
तस्याहतस्य देहात् तु बहु सुस्राव शोणितम् ॥ ५८
यतस्ततस्तद्-वक्त्रेण चामुण्डा सचप्रतीच्छति ।
मुखे समुद्गता येऽस्या रक्त-पातान् महाऽसुराः ॥ ५९
तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् ।
देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ॥ ६०
जघान रक्त-बीजं तं चामुण्डा-पीत-शोणितम् ।
स पपात मही-पृष्ठे शस्त्र-सङ्घ-समाहतः ॥ ६१
नीरक्तश्च महीपाल ! रक्त-बीजो महाऽसुरः ।
ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ॥ ६२
तेषां मातृ-गणो जातो ननर्तासृङ्-मदोद्धतः ॐ ॥ ६३

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे देवी-माहात्म्ये सावर्णिके मन्वन्तरे
रक्त-बीज-वधो नामाष्टमोऽध्यायः ॐ तत् सत् ॥

नवम अध्यायः

निशुम्भ-बधः

ॐ राजोवाच ॥१॥

विचित्रमिदमाख्यातं भगवन् ! भवता मम ।
देव्याश्चरित-माहात्म्यं रक्त-वीज-बधाश्रितम् ॥ २

भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्त-बीजे निपातिते ।
चकार शुम्भो यत् कर्म निशुम्भश्चाति-कोपनः ॥ ३

ऋषिरुवाच ॥४॥

चकार कोपमतुलं रक्त-बीजे निपातिते ।
शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥ ५

हन्य-मानं महा-सैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् ।
अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययाऽसुर-सेनया ॥ ६

तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महाऽसुराः ।
सन्दष्टौष्ठ-पुटाः क्रुद्धा हन्तुं देवीमुपाययुः ॥ ७

आजगाम महा-वीर्यः शुम्भोऽपि स्व-बलैर्वृतः ।
निहन्तुं चण्डिकां कोपात् कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥ ८

ततो युद्धमतीवासीद् देव्या शुम्भ-निशुम्भयोः ।
शर-वर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ॥ ९

चिच्छेदास्ताञ्छरांस्ताभ्यां चण्डिका स्वशरोत्करैः ।
ताडयामास चाङ्गेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ ॥ १०

निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म चादाय सुप्रभम् ।
अताडयन् मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ।। ११

ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् ।
निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्ट-चन्द्रकम् ।। १२

छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः ।
तामप्यस्य द्विधा चक्रे चक्रेणाभि-मुखागताम् ।। १३

कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः ।
आयातं मुष्टि-पातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ।। १४

आविध्याथ गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति ।
साऽपि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ।। १५

ततः परशु-हस्तं तमायान्तं दैत्य-पुङ्गवम् ।
आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भू-तले ।। १६

तस्मिन् निपतिते भूमौ निशुम्भे भीम-विक्रमे ।
भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ।। १७

स रथस्थस्तथाऽत्युच्चैर्गृहीत-परमायुधैः ।
भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः ।। १८

तमायान्तं समालोक्य देवी शङ्खमवादयत् ।
ज्या-शब्दं चापि धनुषश्चकारातीव-दुःसहम् ।। १९

पूरयामास ककुभो निज-घण्टा-स्वनेन च ।
समस्त-दैत्य-सैन्यानां तेजो-वध-विधायिना ।। २०

ततः सिंहो महा-नादैस्त्याजितेभ-महा-मदैः ।
पूरयामास गगनं गां तथैव दिशो दश ।। २१

ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत् ।
कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः ॥ २२

अट्टाट्ट-हासमशिवं शिव-दूती चकार ह ।
तैः शब्दैरसुरास्त्रेसुः शुम्भः कोपं परं ययौ ॥ २३

दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति व्याजहाराम्बिका यदा ।
तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाश-संस्थितैः ॥ २४

शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालाति-भीषणा ।
आयान्ती वह्नि-कूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥ २५

सिंह-नादेन शुम्भस्य व्याप्तं लोक-त्रयान्तरम् ।
निर्घात-निःस्वनो घोरो जितवानवनी-पते ॥ २६

शुम्भ-मुक्ताञ्छरान् देवी शुम्भस्तत् प्रहिताञ्छरान् ।
चिच्छेद स्व-शरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ २७

ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभि-जघान तम् ।
स तदाभिहतो भूमौ मूर्छितो निपपात ह ॥ २८

ततो निशुम्भः सम्प्राप्य चेतनामात्त-कार्मुकः ।
आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥ २९

पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः ।
चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥ ३०

ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गाति-नाशिनी ।
चिच्छेद तानि चक्राणि स्व-शरैः सायकांश्च तान् ॥ ३१

ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डिकाम् ।
अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्य-सेना-समावृतः ॥ ३२

तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका ।
खड्गेन शित-धारेण स च शूलं समाददे ॥ ३३

शूल-हस्तं समायान्तं निशुम्भममरार्दनम् ।
हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ॥ ३४

भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः ।
महा-बलो महा-वीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ॥ ३५

तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य स्वनवत् ततः ।
शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद् भुवि ॥ ३६

ततः सिंहश्चखादोग्रं दंष्ट्रा क्षुण्ण-शिरोधरान् ।
असुरांस्तांस्तथा काली शिव-दूती तथाऽपरान् ॥ ३७

कौमारी-शक्ति-निर्भिन्नाः केचिन्नेशुर्महाऽसुराः ।
ब्रह्माणी-मन्त्र-पूतेन तोयेनान्ये निराकृताः ॥ ३८

माहेश्वरी-त्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे ।
वाराही-तुण्ड-घातेन केचिच्चूर्णी-कृता भुवि ॥ ३९

खण्डं खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाः कृताः ।
वज्रेण चैन्द्री-हस्ताग्र-विमुक्तेन तथाऽपरे ॥ ४०

केचिद् विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् ।
भक्षिताश्चापरे काली-शिव-दूती-मृगाधिपैः ॐ ॥ ४१

श्री मार्कण्डेय-पुराणे देवी-माहात्म्ये सावर्णिके मन्वन्तरे
निशुम्भ-वधो नाम नवमोऽध्यायः ॐ तत सत् ॥

दशम अध्यायः

शुम्भ-वधः

ॐ ऋषिरुवाच ।।१।।

निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राण-सम्मितम् ।
हन्य-मानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद् वचः ।। २

बलावलेपाद् दुष्टे ! त्वं मा दुर्गे ! गर्वमावह ।
अन्यासां बलमाश्रित्य युद्धचसे यातिमानिनी ।। ३

देव्युवाच ।।४।।

एकैवाऽहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ।
पश्यैता दुष्ट ! मय्येव विशन्त्यो मद्-विभूतयः ।। ५

ततः समस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणी-प्रमुखा लयम् ।
तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत् तदाऽम्बिका ।। ६

देव्युवाच ।।७।।

अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदास्थिता ।
तत्-संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ।। ८

ऋषिरुवाच ।।९।।

ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः ।
पश्यतां सर्व-देवानामसुराणां च दारुणम् ।। १०

शर-वर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः ।
तयोर्युद्धमभूद् भूयः सर्व-लोक-भयङ्करम् ।। ११

दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका ।
बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्-प्रतीघात-कर्तृभिः ॥ १२
मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी ।
बभञ्ज लीलयैवोग्र-हुङ्कारोच्चारणादिभिः ॥ १३
ततः शर-शतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः ।
साऽपि तत्-कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः ॥ १४
छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे ।
चिच्छेद देवी चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् ॥ १५
ततः खड्गमुपादाय शत-चन्द्रं च भानु-मत् ।
अभ्यधावत् तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः ॥ १६
तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका ।
धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्क-करामलम् ॥ १७
हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्न-धन्वा वि-सारथिः ।
जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिका-निधनोद्यतः ॥ १८
चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः शरैः ।
तथापि सोऽभ्यधावत् तां मुष्टिमुद्यम्य वेग-वान् ॥ १९
स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्य-पुङ्गवः ।
देव्यास्तं चापि सा देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥ २०
तल-प्रहाराभि-हतो निपपात मही-तले ।
स दैत्य-राजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥ २१
उत्पत्य च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः ।
तत्रापि सा निराधारा युयुधे तेन चण्डिका ॥ २२

नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम् ।
चक्रतुः प्रथमं सिद्ध-मुनि-विस्मय-कारकम् ।। २३

ततो नियुद्धं सु-चिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह ।
उत्पात्य भ्रामयायास चिक्षेप धरणी-तले ।। २४

स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः ।
अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिका-निधनेच्छया ।। २५

तमायान्तं ततो देवी सर्व-दैत्य-जनेश्वरम् ।
जगत्यां पातयामास भित्वा शूलेन वक्षसि ।। २६

स गतासुः पपातोर्व्यां देवी-शूलाग्र-विक्षतः ।
चालयन् सकलां पृथिवीं साब्धि-द्वीपां स-पर्वतां ।। २७

ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि ।
जगत् स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः ।। २८

उत्पात-मेघाः सोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः ।
सरितो मार्ग-वाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ।। २९

ततो देव-गणाः सर्वे हर्ष-निर्भर-मानसाः ।
बभुवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः ।। ३०

अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरो-गणाः ।
ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद् दिवाकरः ।। ३१

जज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः शान्ता दिग्-जनित-स्वनाः ॐ ३२

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे देवी-माहात्म्ये सावर्णिके मन्वन्तरे
शुम्भ-वधो नाम दशमोऽध्यायः ॐ तत् सत् ।।

एकादश अध्यायः

देव्या स्तुतिः

ॐ ऋषिरुवाच ॥१॥

देव्या हते तत्र महा-सुरेन्द्रे,
सेन्द्राः सुरा वह्नि-पुरो-गमास्ताम् ।
कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्ट-लाभाद्,
विकाशि-वक्त्राब्ज-विकाशिताशाः ॥ २

देवि ! प्रपन्नार्ति-हरे ! प्रसीद,
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि ! पाहि विश्वं,
त्वमीश्वरी देवि ! चराचरस्य ॥ ३

आधार-भूता जगतस्त्वमेका,
मही-स्वरूपेण यतः स्थिताऽसि ।
अपां स्वरूप-स्थितया त्वयैत-
दाप्यायते कृत्स्नमलंघ्य-वीर्ये ॥ ४

त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्त-वीर्या,
विश्वस्य बीजं परमाऽसि माया ।
सम्मोहितं देवि ! समस्तमेतत्,
त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्ति-हेतुः ॥ ५

विद्याः समस्तास्तव देवि ! भेदाः,
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।

त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्,

का ते स्तुतिः स्तव्य-परा परोक्तिः ॥ ६

सर्व-भूता यदा देवी स्वर्ग-मुक्ति-प्रदायिनी ।

त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥ ७

सर्वस्य बुद्धि-रूपेण जनस्य हृदि संस्थिते !

स्वर्गापवर्गदे देवि ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ ८

कला-काष्ठादि-रूपेण परिणाम-प्रदायिनि !

विश्वस्योपरतौ शक्ते ! नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ ९

सर्व-मङ्गल-माङ्गल्ये शिवे सर्वार्थ-साधिके !

शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १०

सृष्टि-स्थिति-विनाशानां शक्ति-भूते सनातनि !

गुणाश्रये गुण-मये नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ ११

शरणागत - दीनार्त - परित्राण - परायणे !

सर्वस्यार्त्ति-हरे देवि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १२

हंस-युक्त-विमानस्थे ब्रह्माणी-रूप-धारिणि !

कौशाम्भः-क्षरिके देवि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १३

त्रिशूल-चन्द्राहि-धरे महा-वृषभ-वाहिनि !

माहेश्वरी-स्वरूपेण नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १४

मयूर-कुक्कुट-वृते महा-शक्ति-धरेऽनघे !

कौमारी-रूप-संस्थाने नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १५

शङ्ख - चक्र - गदा - शार्ङ्ग - गृहीत-परमायुधे !

प्रसीद वैष्णवी-रूपे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ॥ १६

गृहीतोग्र-महा-चक्रे दंष्ट्रोद्धृत-वसुन्धरे !
वराह-रूपिणि शिवे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।। १७
नृसिंह-रूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे !
त्रैलोक्य-त्राण-सहिते नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।। १८
किरीटिनि महा-वज्रे सहस्र-नयनोज्ज्वले !
वृत्र-प्राण-हरे चैन्द्रि नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।। १९
शिव-दूती-स्वरूपेण हत-दैत्य-महा-बले !
घोर-रूपे महा-रावे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।। २०
दंष्ट्रा कराल-वदने शिरो-माला-विभूषणे !
चामुण्डे मुण्ड-मथने नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।। २१
लक्ष्मि लज्जे महा-विद्ये श्रद्धे पुष्टि-स्वधे ध्रुवे !
महा-रात्रि महा-माये नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।। २२
मेधे सरस्वति वरे भूति बाभ्रवि तामसि !
नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि ! नमोऽस्तु ते ।। २३
सर्व-स्वरूपे सर्वेशे सर्व-शक्ति-समन्विते !
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि ! नमोऽस्तु ते ।। २४
एतत् ते वदनं सौम्यं लोचन-त्रय-भूषितम् ।
पातु नः सर्व-भीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते ।। २५
ज्वाला - करालमत्युग्रमशेषासुर - सूदनम् ।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि ! नमोऽस्तु ते ।। २६
हिनस्ति दैत्य-तेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि! पापेभ्योऽनः सुतानिव ।। २७

असुरासृग्-वसा-पङ्क-चर्चितस्ते करोज्ज्वलः ।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके ! त्वां नता वयम् ॥ २८

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा,
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां,
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥ २९

एतत् कृतं यत् कदनं त्वयाऽद्य,
धर्म-द्विषां देवि ! महाऽसुराणाम् ।
रूपैरनेकैर्बहुधाऽऽत्म-मूर्तिम्,
कृत्वाऽम्बिके तत् प्रकरोति काऽन्या ॥ ३०

विद्यासु शास्त्रेषु विवेक-दीपे-
ष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या ?
ममत्व-गर्तेऽति-महान्धकारे,
विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥ ३१

रक्षांसि यत्रोग्र-विषाश्च नागा,
यत्रारयो दस्यु-बलानि यत्र ।
दावानलो यत्र तथाब्धि-मध्ये,
तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥ ३२

विश्वेश्वरि ! त्वं परिपासि विश्वं,
विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम् ।
विश्वेश-वन्द्या भवती भवन्ति,
विश्वाश्रया ये त्वयि भक्ति-नम्राः ॥ ३३

देवि ! प्रसीद परि-पालय नोऽरि-भीते—
र्नित्यं यथाऽसुर-वधादधुनैव सद्यः ।
पापानि सर्व-जगतां प्रशमं नयाशु,
उत्पात-पाक-जनितांश्च महोप-सर्गान् ।। ३४
प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि ! विश्वार्ति-हारिणि !
त्रैलोक्य-वासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव ।। ३५
देव्युवाच ।।३६।।
वरदाऽहं सुर-गणा वरं यन्मनसेच्छथ ।
तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुप-कारकम् ।। ३७
देवा ऊचुः ।।३८।।
सर्वा-बाधा-प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि !
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्-वैरि-विनाशनम् ।। ३९
देव्युवाच ।। ४०।।
वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टा-विंशतिमे युगे ।
शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महाऽसुरौ ।। ४१
नन्द-गोप-गृहे जाता यशोदा-गर्भ-सम्भवा ।
ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचल-निवासिनी ।। ४२
पुनरप्यति-रौद्रेण रूपेण पृथिवी-तले ।
अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ।। ४३
भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान् महाऽसुरान् ।
रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमी-कुसुमोपमाः ।। ४४

ततो मां देवताः सर्वे मर्त्य-लोके च मानवाः ।
स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्त-दन्तिकाम् ।। ४५

भूयश्च शत-वार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि ।
मुनिभिः संस्तुता भूमौ सम्भविष्याम्ययोनिजा ।। ४६

ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षिष्यामि यन्मुनीन् ।
कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ।। ४७

ततोऽहमखिलं लोकमात्म-देह-समुद्भवैः ।
भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टेः प्राण-धारकैः ।। ४८

शाकम्भरीति विख्यातिं तदा यास्याम्यहं भुवि ।
तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महाऽसुरम् ।। ४९

दुर्गा-देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
पुनश्चाहं यदा भीमं रूप कृत्वा हिमाचले ।। ५०

रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राण-कारणात् ।
तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्र-मूर्तयः ।। ५१

भीमा-देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति ।
यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महा-बाधां करिष्यति ।। ५२

तदाऽहं भ्रामरं रूपं कृत्वाऽसंख्येय-षट्-पदम् ।
त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महाऽसुरम् ।। ५३

भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः ।। ५४

इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ।
तदा तदावतीर्याऽहं करिष्याम्यरि-संक्षयम् ॐ ।। ५५

श्रीमार्कण्डेय पुराणे देवी-माहात्म्ये सावर्णिके मन्वन्तरे
देव्याः स्तुति-र्नामैकादशोऽध्यायः ॐ तत् सत् ।।

द्वादश अध्यायः

फल-स्तुतिः

ॐ देव्युवाच ॥१॥

एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः ।
तस्याऽहं सकलां बाधां नाशयिष्याम्यसंशयम् ॥ २

मधु-कैटभ-नाशं च महिषासुर-घातनम् ।
कीर्तयिष्यन्ति ये तद्-वद् वधं शुम्भ-निशुम्भयोः ॥ ३

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैक-चेतसः ।
श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहात्म्यमुत्तमम् ॥ ४

न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद् दुष्कृतोत्था न चापदः ।
भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्ट-वियोजनम् ॥ ५

शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः ।
न शस्त्रानल-तोयौघात् कदाचित् सम्भविष्यति ॥ ६

तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समाहितैः ।
श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ॥ ७

उपसर्गानशेषांस्तु महा-मारी-समुद्भवान् ।
तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ॥ ८

यत्रैतत् पठ्यते सम्यङ् नित्यमायतने मम ।
सदा न तद् विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ॥ ९

बलि-प्रदाने पूजायामग्नि-कार्ये महोत्सवे ।
सर्वं ममैतच्चरितमुच्चार्यं श्राव्यमेव च ॥ १०

जानताऽजानता वापि बलि-पूजां तथा कृताम् ।
प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्नि-होमं तथा कृतम् ।। ११
शरत्-काले महा-पूजा क्रियते या च वार्षिकी ।
तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्ति-समन्वितः ।। १२
सर्वा-बाधा-विनिर्मुक्तो धन-धान्य-समन्वितः ।
मनुष्यो मत्-प्रसादेन भविष्यति न संशयः ।। १३
श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः ।
पराक्रमं च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ।। १४
रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोप-पद्यते ।
नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम श्रृण्वताम् ।। १५
शान्ति-कर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्न-दर्शने ।
ग्रह-पीडासु चोग्रासु माहात्म्यं श्रृणुयान्मम ।। १६
उप-सर्गाः शमं यान्ति ग्रह-पीडाश्च दारुणाः ।
दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सु-स्वप्नमुप-जायते ।। १७
बाल-ग्रहाभि-भूतानां बालानां शान्ति-कारकम् ।
संघात-भेदे च नृणां मैत्री-करणमुत्तमम् ।। १८
दुर्वृत्तानामशेषाणां बल-हानि-करं परम् ।
रक्षो-भूत-पिशाचानां पठनादेव नाशनम् ।। १९
सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधि-कारकम् ।
पशु-पुष्पार्घ्य-धूपैश्च गन्ध-दीपैस्तथोत्तमैः ।। २०
विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् ।
अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ।। २१

प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन् सकृत् सुचरिते श्रुते ।
श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति ।। २२
रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम ।
युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्ट-दैत्य-निबर्हणम् ।। २३
तस्मिञ्छ्रुते वैरि-कृतं भयं पुंसां न जायते ।
युष्माभिः स्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभिः कृताः ।। २४
ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम् ।
अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्नि-परि-वारितः ।। २५
दस्युभिर्वा वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः ।
सिंह-व्याघ्रानु-यातो वा वने वा वन-हस्तिभिः ।। २६
राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बन्ध-गतोऽपि वा ।
आघूर्णितो वा वातेन स्थितः पोते महार्णवे ।। २७
पतत्सु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृश-दारुणे ।
सर्वा-बाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ।। २८
स्मरन् ममैतच्चरितं नरो मुच्येत सङ्कटात् ।। २९
मम प्रभावात् सिंहाद्या दस्यवो वैरिणस्तथा ।
दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ।। ३०

ऋषिरुवाच ।।३१।।

इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्ड-विक्रमा ।
पश्यतामेव देवानां तत्रैवान्तरधीयत ।। ३२
तेऽपि देवा निरातङ्काः स्वाधिकारान् यथा पुरा ।
यज्ञ-भाग-भुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः ।। ३३

दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देव-रिपौ युधि ।
जगद्-विध्वंसिनि तस्मिन् महोग्रेऽतुल-विक्रमे ॥ ३४

निशुम्भे च महा-वीर्ये शेषाः पातालमाययुः ॥ ३५

एवं भगवती देवी सा नित्याऽपि पुनः पुनः ।
सम्भूय कुरुते भूप ! जगतः परि-पालनम् ॥ ३६

तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते ।
सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ॥ ३७

व्याप्तं तयैतत् सकलं ब्रह्माण्डं मनुजेश्वर !
महा-काल्या महा-काले महा-मारी-स्वरूपया ॥ ३८

सैव काले महा-मारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा ।
स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥ ३९

भव-काले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धि-प्रदा गृहे ।
सैवाऽभावे तथाऽलक्ष्मीर्विनाशायोप-जायते ॥ ४०

स्तुता सम्पूजिता पुष्पैर्धूप-गन्धादिभिस्तथा ।
ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे गतिं शुभाम् ॐ ॥ ४१

श्रीमार्कण्डेय-पुराणे देवी-माहात्म्ये सावर्णिके मन्वन्तरे
फल-स्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः ॐ तत् सत् ॥

त्रयोदश अध्यायः

सुरथ-वैश्ययोर्वर-प्रदानम्

ॐ ऋषिरुवाच ॥१॥

एतत् ते कथितं भूप ! देवी-माहात्म्यमुत्तमम् ।
एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ॥ २

विद्या तथैव क्रियते भगवद्-विष्णु-मायया ।
तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ॥ ३

मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे ।
तामुपैहि महाराज ! शरणं परमेश्वरीम् ॥ ४

आराधिता सैव नृणां भोग-स्वर्गापवर्गदा ॥ ५

मार्कण्डेय उवाच ॥६॥

इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ।
प्रणिपत्य महा-भागं तम् ऋषिं शंसित-व्रतम् ॥ ७

निर्विण्णोऽति-ममत्वेन राज्यापहरणेन च ।
जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महा-मुने ॥ ८

सन्दर्शनार्थमम्बाया नदी-पुलिन-संस्थितः ।
स च वैश्यस्तपस्तेपे देवी-सूक्तं परं जपन् ॥ ९

तौ तस्मिन् पुलिने देव्याः कृत्या मूर्ति मही-मयीम् ।
अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्प-धूपाग्नि-तर्पणैः ॥ १०

निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ ।
ददतुस्तौ बलिं चैव निज-गात्रासृगुक्षितम् ॥ ११

एवं समाराधयतोस्त्रिभिर्वर्षैर्यतात्मनोः ॥ १२

परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ॥ १३

देव्युवाच ॥१४॥

यत् प्रार्थ्यते त्वया भूप ! त्वया च कुल-नन्दन !
मत्तस्तत् प्राप्यतां सर्वं परि-तुष्टा ददामि तत् ॥ १५

मार्कण्डेय उवाच ॥१६॥

ततो वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्य-जन्मनि ।
अत्रैव च निजं राज्यं हत-शत्रु-बलं बलात् ॥ १७

सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्ण-मानसः ।
ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्ग-विच्युति-कारकम् ॥ १८

देव्युवाच ॥१९॥

स्वल्पैरहोभिर्नृपते ! स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् ॥ २०

हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥ २१

मृतश्च भूयः सम्प्राप्य जन्म देवाद् विवस्वतः ॥ २२

सावर्णिको नाम मनुर्भवान् भुवि भविष्यति ॥ २३

वैश्य-वर्य ! त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभि-वांछितः । २४
तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति ॥ २५

मार्कण्डेय उवाच ॥२६॥

इति दत्वा तयोर्देवी यथाऽभिलषितं वरम् ।
बभूवाऽन्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता ॥ २७
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ।
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॥ २८
एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ।
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॐ ॥ २९

श्रीमार्कण्डेयपुराणे देवीमाहात्म्ये सावर्णिके मन्वन्तरेसुरथ-वैश्ययोर्वर-प्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॐ तत् सत् ॥

नवार्ण-मन्त्र-जप

सप्तशती का पाठ पूर्ण हो जाने पर निम्न नवार्ण-मन्त्र का यथा-शक्ति एक माला (१०८ वार) या कम-से-कम ११ बार जप करे—

ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ।

जप कर चुकने पर जप का फल भगवती के वाएं हाथ में भावना से निम्न मन्त्र द्वारा समर्पित करे—

ॐ गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवेतु मे देवि ! त्वत्-प्रसादात् सुरेश्वरि ॥
इदं जपं श्रीचण्डिका-देव्यै समर्पयामिस्वाहा ।

देवी-सूक्त—वैदिक

विनियोग—ॐ रुद्रेभिरित्यष्टर्चस्य देवी-सूक्तस्य वागाम्भृणी ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, श्रीदुर्गा देवता, श्री जगदम्बा प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—वागाम्भृणी-ऋषये नमः शिरसि, त्रिष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीदुर्गा-देवतायै नमः हृदि, जगदम्बा-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

ध्यान—

भुजाष्ट-युक्तां महिषस्य मर्दिनीम्।
स-शङ्ख-चक्रां शर-शूल धारिणीं ॥
तां दिव्य-योगीं सह-जात-वेदसीं।
दुर्गां सदाऽहं शरणं प्रपद्ये ॥

ॐ अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः। अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥१॥ अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम्। अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥२॥ अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानां तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥३॥ मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम्। अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि ॥४॥ अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः। यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं

तमृषिं तं सुमेधाम् ।।५।। अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्म-द्विषे शरवे हन्तवा उ। अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावा-पृथिवी आ विवेश ।।६।। अहं सुवे पितरमस्य मूर्द्धन् मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे। ततो वितिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोप-स्पृशामि ।।७।। अहमेव वात इव प्रवास्यारभमाणा भुवनानि विश्वा। परो दिवा पर एना पृथिव्यै तावती महिमा संबभूव ।।८।।

देवी-सूक्त——स्मार्त्त

विनियोग—ॐ अस्य श्रीदेवी-सूक्तस्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्रादि-देवाः ऋषयः, अनुष्टप् छन्दः, श्रीत्रिशक्ति-रूपिणी महा-लक्ष्मीः देवता, श्रीचण्डिका-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—ब्रह्म-विष्णु-रुद्रादि-देव-ऋषिभ्यो नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीत्रिशक्ति-रूपिणी-महालक्ष्मी-देवतायै नमः हृदि, श्रीचण्डिका-प्रीत्यर्थे पाठे विनि-योगाय नमः सर्वांगे।

ध्यान—लक्ष्मी-प्रदान-समये नव-विद्रुमाभाम्
विद्या-प्रदान-समये शरदिन्दु-शुभ्राम्।
विद्वेषि-वर्ग-विजयेऽपि तमाल-नीलाम्,
देवीं त्रि-लोक-जननीं शरणं प्रपद्ये ।।

ॐ देवा ऊचुः

नमो देव्यै महा-देव्यै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ।। १

[देखिए पृष्ठ ७७ श्लोक ६ से ८२ तक पाठ करें।]

प्राधानिक-रहस्य

विनियोग—ॐ अस्य श्रीदेव्याः प्राधानिक-रहस्यस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्द, श्रीमहाकाली देवता, ऐं नन्दजा शक्तिः, ह्सौं रक्त-दन्तिका वीजं, रं अग्निः तत्त्वं, अभीष्ट-फल-सिद्धये सप्तशती-पाठान्ते पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—ब्रह्मा-ऋषये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहाकाली-देवतायै नमः हृदि, ऐं नन्दजा-शक्त्यै नमः नाभौ, ह्सौं रक्त-दन्तिका-वीजाय नमः लिंगे, रं अग्नि-तत्त्वाय नमः हृदि, अभीष्ट-फल-सिद्धये सप्तशती-पाठान्ते पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

॥ ॐ राजोवाच ॥

भगवन्नवतारा मे चण्डिकायास्त्वयोदिताः ।
एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन् ! प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥ १

आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन च द्विज !
विधिना ब्रूहि सकलं यथा-वत् प्रणतस्य मे ॥ २

॥ ऋषिरुवाच ॥

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते ।
भक्तोऽसीति न मे किञ्चित् तवावाच्यं नराधिप ॥ ३

सर्वस्याद्या महालक्ष्मीस्त्रिगुणा परमेश्वरी ।
लक्ष्यालक्ष्य-स्वरूपा सा व्याप्य कृत्स्नं व्यवस्थिता ॥ ४

मातु-लिङ्गं गदां खेटं पान-पात्रं च बिभ्रती ।
नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रती नृप ! मूर्द्धनि ॥ ५

तप्त-काञ्चन-वर्णाभा तप्त-काञ्चन-भूषणा ।
शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥ ६

शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी ।
बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ॥ ७

सा भिन्नाञ्जन-सङ्काशा दंष्ट्राञ्चित-वरानना ।
विशाल-लोचना नारी बभूव तनु-मध्यमा ॥ ८

खड्ग - पात्र - शिरः - खेटैरलंकृत - चतुर्भुजा ।
कबन्ध-हारं शिरसा बिभ्राणा हि शिरः-स्रजम् ॥ ९

सा प्रोवाच महा-लक्ष्मीं तामसी प्रमदोत्तमा ।
नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ॥ १०

तां प्रोवाच महा-लक्ष्मीस्तामसीं प्रमदोत्तमाम् ।
ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते ॥ ११

महा-माया महा-काली महा-मारी क्षुधा तृषा ।
निद्रा तृष्णा चैक-वीरा काल-रात्रिर्दुरत्यया ॥ १२

इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः ।
एभिः कर्माणि ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ॥ १३

तामित्युक्त्वा महा-लक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप !
सत्वाख्येनाति-शुद्धेन गुणेनेन्दु-प्रभं दधौ ॥ १४

अक्ष-मालांकुश-धरा वीणा-पुस्तक-धारिणी ।
सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ॥ १५

महा-विद्या महा-वाणी भारती वाक् सरस्वती ।
आर्या ब्राह्मी काम-धेनुर्वेद-गर्भा सुरेश्वरी ॥ १६

अथोवाच महा-लक्ष्मीर्महा-कालीं सरस्वतीम् ।
युवां जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥ १७

इत्युक्त्वा ते महा-लक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् ।
हिरण्य-गर्भौ रुचिरौ स्त्री-पुंसौ कमलासनौ ॥ १८

ब्रह्मन् विधे विरिञ्चेति धातरित्याह तं नरम् ।
श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियम् ॥ १९

महा-काली भारती च मिथुने सृजतः सह ।
एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥ २०

नील-कण्ठं रक्त-बाहुं श्वेताङ्गं चन्द्र-शेखरम् ।
जनयामास पुरुषं महा-काली सितां स्त्रियम् ॥ २१

स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलोचनः ।
त्रयी विद्या काम-धेनुः सा स्त्री भाषा स्वराक्षरा ॥ २२

सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप !
जनयामास नामानि तयोरपि वदामि ते ॥ २३

विष्णुः कृष्णो हृषीकेशो वासुदेवो जनार्दनः ।
उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा ॥ २४

एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे ।
चक्षुष्मन्तोऽनुपश्यन्ति नेतरेऽतद्विदो जनाः ॥ २५

ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महा-लक्ष्मीर्नृप ! त्रयीम् ।
रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥ २६

स्वरया सह सम्भूय विरिञ्चोऽण्डमजीजनत् ।
बिभेद भगवान् रुद्रस्तद् गौर्या सह वीर्यवान् ।। २७

अण्ड-मध्ये प्रधानादि कार्य-जातमभून् नृप !
महा-भूतात्मकं सर्वं जगत् स्थावर-जङ्गमम् ।। २८

पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः ।
संजहार जगत् सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ।। २९

महा-लक्ष्मीर्महाराज ! सर्व-सत्व-मयीश्वरी ।
निराकारा च साकारा सैव नानाभिधान-भृत् ।। ३०

नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् ॐ ।। ३१

वैकृतिक-रहस्य

विनियोग-ॐ अस्य श्रीदेव्याः वैकृतिक-रहस्यस्य विष्णुः ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहालक्ष्मीः देवता, ह्सौं दुर्गा बीजं, ह्रीं शाकम्भरी शक्तिः, हं वायुः तत्त्वं, अभीष्ट-फल-सिद्धये सप्तशती-पाठान्ते पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास-विष्णु-ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहालक्ष्मी देवतायै नमः हृदि, ह्सौं दुर्गा-बीजाय नमः लिंगे, ह्रीं शाकम्भरी-शक्तये नमः नाभौ, हं वायु-तत्त्वाय नमः हृदि, अभीष्ट-फल-सिद्धये सप्तशती-पाठान्ते पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

॥ ॐ ऋषिरुवाच ॥

त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधोदिता।
सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १
योग-निद्रा हरेरुक्ता महा-काली तमो-गुणा।
मधु-कैटभ-नाशार्थं यां तुष्टावाम्बुजासनः ॥ २
दश-वक्त्रा दश-भुजा दश-पादाञ्जन-प्रभा।
विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचन-मालया ॥ ३
स्फुरद्-दशन-दंष्ट्रा सा भीम-रूपाऽपि भूमिप !
रूप-सौभाग्य-कान्तीनां सा प्रतिष्ठा महा-श्रियः ॥ ४
खड्ग-वाण-गदा-शूलं पाश-चक्र-भुशुण्डि-भृत्।
परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्-रुधिरं दधौ ॥ ५
एषा सा वैष्णवी माया महा-काली दुरत्यया।
आराधिता वशी-कुर्यात् पूजा-कर्तुश्चराचरम् ॥ ६

सर्व-देव-शरीरेभ्यो याऽऽविर्भूताऽमित-प्रभा ।
त्रिगुणा सा महा-लक्ष्मीः साक्षान्महिष-मर्दिनी ॥ ७

श्वेतानना नील-भुजा सुश्वेत-स्तन-मण्डला ।
रक्त-मध्या रक्त-पादा नील-जङ्घोरुरुन्मदा ॥ ८

सुचित्र-जघना चित्र-माल्याम्बर-विभूषणा ।
चित्रानुलेपना कान्ति-रूप-सौभाग्य-शालिनी ॥ ९

अष्टादश-भुजा पूज्या सा सहस्र-भुजा सती ।
आयुधान्यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधः-कर-क्रमात् ॥ १०

अक्ष-माला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा ।
चक्रं त्रिशूलं परशुः शङ्खो घण्टा च पाशकः ॥ ११

शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पान-पात्रं कमण्डलुः ।
अलंकृत-भुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥ १२

सर्व-देवमयीमीशां महा-लक्ष्मीमिमां नृप !
पूजयेत् सर्व-देवानां स लोकानां प्रभुर्भवेत् ॥ १३

गौरी-देहात् समुद्भूता या सत्त्वैक-गुणाश्रया ।
साक्षात् सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुर-निबर्हिणी ॥ १४

दधौ चाष्ट-भुजा बाण-मुसले शूल-चक्र-भृत् ।
शङ्खं घण्टां लाङ्गलं च कार्मुकं वसुधाधिप ॥ १५

एषा सम्पूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति ।
निशुम्भ-मथिनी देवी शुम्भासुर-निबर्हिणी ॥ १६

इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां तव पार्थिव !
उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥ १७

महा-लक्ष्मीर्यदा पूज्या महा-काली सरस्वती ।
दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुन-त्रयम् ।। १८
विरिञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे ।
वामे लक्ष्म्या हृषीकेशः पुरतो देवता-त्रयम् ।। १९
अष्टादश-भुजा मध्ये वामे चास्या दशानना ।
दक्षिणेऽष्ट-भुजा लक्ष्मीर्महतीति समर्चयेत् ।। २०
अष्टादश-भुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप !
दशानना चाष्ट-भुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ।। २१
काल-मृत्यू च सम्पूज्यौ सर्वारिष्ट-प्रशान्तये ।
यदा चाष्ट-भुजा पूज्या शुम्भासुर-निर्बर्हिणी ।। २२
नवास्याः शक्तयः पूज्यास्तदा रुद्र-विनायकौ ।
नमो देव्या इति स्तोत्रैर्महा-लक्ष्मीं समर्चयेत् ।। २३
अवतार-त्रयार्चायां स्तोत्र-मन्त्रास्तदाश्रयाः ।
अष्टादश-भुजा चैषा पूज्या महिष-मर्दिनी ।। २४
महा-लक्ष्मीर्महा-काली सैव प्रोक्ता सरस्वती ।
ईश्वरी पुण्य-पापानां सर्व-लोक-महेश्वरी ।। २५
महिषान्त-करी येन पूजिता स जगत्-प्रभुः ।
पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्त-वत्सलाम् ।। २६
अर्घ्यादिभिरलङ्कारैर्गन्ध-पुष्पैस्तथाक्षतैः ।
धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नाना-भक्ष्य-समन्वितैः ।। २७
रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप !
प्रणामाचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ।। २८

स-कर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्ति-भाव-समन्वितैः ।
वाम-भागेऽग्रतो देव्याश्छिन्न-शीर्षं महाऽसुरम् ॥ २९

पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया ।
दक्षिणे पुरतः सिंहं समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥ ३०

वाहनं पूजयेद् देव्या धृतं येन चराचरम् ।
कुर्याच्च स्तवनं धीमांस्तस्या एकाग्र-मानसः ॥ ३१

ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः ।
एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥ ३२

चरितार्धं तु न जपेज्जपंश्छिद्रमवाप्नुयात् ।
प्रदक्षिणा-नमस्कारान् कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥ ३३

क्षमापयेज्जगद्-धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः ।
प्रति-श्लोकं च जुहुयात् पायसं तिल-सर्पिषा ॥ ३४

जुहुयात् स्तोत्र-मन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः ।
भूयो नाम-पदैर्देवीं पूजयेत् सु-समाहितः ॥ ३५

प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्राणानारोप्य चात्मनि ।
सुचिरं भावयेद् देवीं चण्डिकां तन्मयो भवेत् ॥ ३६

एवं यः पूजयेद् भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् ।
भुक्त्वा भोगान् यथा-कामं देवी-सायुज्यमाप्नुयात् ॥ ३७

यो न पूजयते नित्यं चण्डिकां भक्त-वत्सलाम् ।
भस्मी-कृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत् परमेश्वरी ॥ ३८

तस्मात् पूजय भूपाल ! सर्व-लोक-महेश्वरीम् ।
यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ॐ ॥ ३९

मूर्ति-रहस्य

विनियोग—ॐ अस्य श्रीदेव्याः मूर्ति-रहस्यस्य रुद्र ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहासरस्वती देवता, क्लीं भीमा-शक्तिः, भ्रामरी वीजं, यं सूर्यः तत्त्वं, अभीष्ट-फल-सिद्धये सप्त-शती-पाठान्ते पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—रुद्र-ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीमहा-सरस्वती-देवतायै नमः हृदि, क्लीं भीमा-शक्तये नमः नाभौ, भ्रामरी-वीजाय नमः लिङ्गे, यं सूर्य-तत्त्वाय नमः हृदि, अभीष्ट-फल-सिद्धये सप्तशती-पाठान्ते पाठे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

॥ ॐ ऋषिरुवाच ॥

नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा।
स्तुता सा पूजिता भक्त्या वशी-कुर्याज्जगत्-त्रयम् ॥ १
कनकोत्तम-कान्तिः सा सु-कान्ति-कनकाम्बरा।
देवी कनक-वर्णाभा कनकोत्तम्-भूषणा ॥ २
कमलाङ्कुश-पाशाब्जैरलंकृत-चतुर्भुजा।
इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्रीरुक्माम्बुजासना ॥ ३
या रक्त-दन्तिका नाम देवी प्रोक्ता मयानघ !
तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्व-भयापहम् ॥ ४
रक्ताम्बरा रक्त-वर्णा रक्त-सर्वाङ्ग-भूषणा।
रक्तायुधा रक्त-नेत्रा रक्त-केशाति-भीषणा ॥ ५
रक्त-तीक्ष्ण-नखा रक्त-दशना रक्त-दन्तिका।
पतिं नारीवानुरक्ता देवी-भक्तं भजेज्जनम् ॥ ६

वसुधेव विशाला सा सुमेरु-युगल-स्तनी ।
दीर्घौ लम्बावति-स्थूलौ तावतीव-मनोहरौ ॥ ७

कर्कशावति-कान्तौ तौ सर्वानन्द-पयोनिधी ।
भक्तान् सम्पाययेद् देवी सर्व-काम-दुघौ स्तनौ ॥ ८

खड्गं पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च बिभर्ति सा ।
आख्याता रक्त-चामुण्डा देवी योगेश्वरीति च ॥ ९

अनया व्याप्तमखिलं जगत् स्थावर-जङ्गमम् ।
इमां यः पूजयेद् भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ॥ १०

अधीते य इमं नित्यं रक्त-दन्त्या वपुः-स्तवम् ।
तं सा परिचरेद् देवी पतिं प्रियमिवाङ्गना ॥ ११

शाकम्भरी नील-वर्णा नीलोत्पल-विलोचना ।
गम्भीर - नाभिस्त्रिवली - विभूषित - तनूदरी ॥ १२

सु-कर्कश - समोत्तुङ्ग - वृत्त-पीन-घन - स्तनी ।
मुष्टिं शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥ १३

पुष्प-पल्लव-मूलादि-फलाढ्यं शाक-सञ्चयम् ।
काम्यानन्त-रसैर्युक्तं क्षुत्-तृण्मृत्यु-भयापहम् ॥ १४

कार्मुकं च स्फुरत्-कान्ति बिभ्रती परमेश्वरी ।
शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ १५

विशोका दुष्ट-दमनी शमनी दुरितापदाम् ।
उमा गौरी सती चण्डी कालिका साऽपि पार्वती ॥ १६

शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायञ्जपन् सम्पूजयन् नमन् ।
अक्षय्यमश्नुते शीघ्रमन्न-पानामृतं फलम् ॥ १७

भीमाऽपि नील-वर्णा सा दंष्ट्रा-दशन-भासुरा ।
विशाल-लोचना नारी वृत्त-पीन-पयोधरा ॥ १८

चन्द्र-हासं च डमरुं शिरः पात्रं च बिभ्रती ।
एक-वीरा काल-रात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥ १९

तेजो-मण्डल दुर्धर्षा भ्रामरी चित्र-कान्ति-भृत् ।
चित्रानुलेपना देवी चित्राभरण-भूषिता ॥ २०

चित्र-भ्रमर-पाणिः सा महा-मारीति गीयते ।
इत्येता मूर्तयो देव्या याः ख्याता वसुधाधिप ॥ २१

जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिताः काम-धेनवः ।
इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित् त्वया ॥ २२

व्याख्यानं दिव्य-मूर्तीनामभीष्ट-फल-दायकम् ।
तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन देवीं जप निरन्तरम् ॥ २३

सप्त जन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्म-हत्या - समैरपि ।
पाठ-मात्रेण मन्त्राणां मुच्यते सर्व-किल्विषैः ॥ २४

देव्या ध्यानं मया ख्यातं गुह्याद् गुह्य-तरं महत् ।
तस्मात् सर्व-प्रयत्नेन सर्व-काम-फल-प्रदम् ॥ २५

क्षमा-प्रार्थना

प्रत्येक स्तोत्र के पूर्ण होने पर क्षमा-प्रार्थना अवश्य करे । यथा—

ॐ यदक्षरं परिभ्रष्टं मात्रा-हीनं तु यद् भवेत् ।
तत् सर्वं क्षम्यतां देवि ! प्रसीद परमेश्वरि ॥

सप्तशती–साहित्य

'दुर्गा-सप्तशती' की प्रशंसा में 'लक्ष्मी-तन्त्र' में लिखा है कि---'भगवती के आविर्भाव और उनके कर्मों से युक्त इस स्तव को द्विज के मुख से जानकर अपने हृदय में निष्ठापूर्वक धारण कर जो मनुष्य सदा इसका मनन करता है, वह माया-जाल को नष्ट कर सद्-ज्ञान को प्राप्त करता है और समस्त आपत्तियों को दूर कर सभी ऐश्वर्यों को पाता है।"

ऐसी सिद्धिदा 'सप्तशती' सम्बन्धी उपयोगी पुस्तकें

१—सप्तशती-तत्व **मूल्य ६-०० रु०**

'सप्तशती' के ऐतिहासिक आख्यान की दार्शनिक व्याख्या।

२—सप्तशती-सूक्त-रहस्य **६-००**

सप्तशती की पाँच स्तुतियों---१ रात्रि-सूक्त, २ शक्रादि-स्तुति, ३ श्री नारायणी स्तुति, ४ श्री देवी उक्ति, ५ देवी-सूक्त--की ज्ञान-दायिनी विस्तृत व्याख्या।

३—मन्त्रात्मक सप्तशती भाग १-२ **१८-००**

इसमें सप्तशती के प्रत्येक मन्त्र के अनुष्ठान की अभूत-पूर्व विधि दी गई है, जो गुप्तावतार बाबा श्री हिमालय के गुह्य-प्रदेश से १९२४ के अनेक वर्षों पूर्व ले आये थे।

४—श्री दुर्गा सप्तशती (हिन्दी पद्यानुवाद) ४-००

जो लोग दुर्गा-सप्तशती संस्कृत में नहीं पढ़ सकते, उनके लिये यह अनुवाद कौल-कल्पतरु शुक्ल जी द्वारा प्रस्तुत किया गया है और इसका पाठ करके सहस्रों बन्धु लाभ उठा रहे हैं।

५—नवरात्र-कल्पतरु **१०-००**

नवरात्र के श्रेष्ठ काल में सप्तशती के पारायण का विशेष महत्व है। इस लेख-संग्रह से नवरात्र की विशेषताओं को जानकर सप्तशती से वास्तविक लाभ उठाएँ।

पता : कल्याण मन्दिर, अलोपीबाग मार्ग, प्रयाग–६